प्यारे नबी (सल्ल॰) के चार यार (2)

हज़रत उमर फ़ारूक़ (रज़ि॰)

लेखक

इरफ़ान ख़लीली

अनुवादक

आबिद हामिदी

किताब के अन्दर

क्या	कहाँ
कुछ किताब के बारे में	7
कुछ अल्फ़ाज़ का मतलब	8
नाम और ख़ानदान	9
पैदाइश और बचपन	10
जवानी के खेल	11
तिजारत भी की	12
इस्लाम से दुश्मनी	13
प्यारे नबी *(सल्ल०)* की दुआ	14
आख़िर जोश आ गया	15
दुआ का असर	16
अल्लाहु-अकबर	17
फ़ारूक़ का लक़ब	18
हिजरत (प्रस्थान)	19
अज़ान का तरीक़ा	20
नबी *(सल्ल०)* से मुहब्बत	21
दिल की मुराद पूरी हुई	22
सबसे पहला वक़्फ़	23
तक़रीर का जादू	24
ख़लीफ़ा हो गए	25
ईरान पर हमला	26

एक टोकरा मिट्टी 27
रुस्तम मारा गया 28
दरिया में घोड़े दौड़ा दिए 29
नहावन्द की लड़ाई 30
ईरानी सल्तनत का ख़ातिमा 31
दमिश्क़ फ़तह हो गया 32
हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* की माज़ूली 33
बैतुल-मक़दिस की फ़तह 35
बैतुल-मक़दिस में दाख़िला 36
मिस्र की फ़ुतूहात 37
ग़ैरते-ईमानी 38
क़ातिलाना हमला 39
आख़िरी ख़ाहिश 40
हज़रत उमर *(रज़ि.)* की वसीयत 41
हज़रत उमर *(रज़ि.)* चल बसे 42
हज़रत उमर *(रज़ि.)* कैसे थे 43
अल्लाह की नाराज़ी का डर 44
प्यारे नबी *(सल्ल.)* से मुहब्बत 45
नबी *(सल्ल.)* की पैरवी 46
एहतियात 47
सादगी और ख़ाकसारी 48
क़नाअत पसन्दी 49
बराबरी का ख़याल 50

ज़िम्मेदारी का एहसास 51
ख़िदमत का शौक़ 52
ईमानदार की क़द्र 53
रहमदिली 54
क़ियामत का डर 55
वादे का ख़याल रखते 56
इनसाफ़ 57
बैतुलमाल अमानत है 58
दीन की समझ 59
उसूल की पाबन्दी 60
कारनामे 61
सल्तनत का फैलाव 62
राज्यों का इन्तिज़ाम 63
पुलिस अफ़सर की ज़िम्मेदारी 64
जेल-ख़ाना और बैतुलमाल 65
जनता की हुकूमत 66
जनता की हुकूमत की पहचान 67
ग़लती पर टोकने की आज़ादी 68
औरत ने टोक दिया 69
खेती बाड़ी को तरक़्क़ी देना 70
बेहतरीन सिपहसालार 71
क़ाज़ियों को मुक़र्रर करना 72
नसीहत से भरा ख़त 73

इनसाफ़ की नज़र में सब बराबर 74
ख़बर पहुँचाने का इन्तिज़ाम 75
तालीम की तरक़्क़ी 76
हिज़री सन की शुरूआत 77
ज़िम्मियों के हुक़ूक़ 78
अमीरुल-मोमिनीन का लक़ब 79
पानी का इन्तिज़ाम 80
इमारतें बनवाईं 81
शहरों को आबाद किया 82
उमर *(रज़ि.)* की नई ईजादें 84
प्यारी-प्यारी नसीहतें 86

बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

"अल्लाह के नाम से जो बड़ा मेहरबान, निहायत रहमवाला है"

कुछ किताब के बारे में

वादे के मुताबिक़ चार यार का दूसरा भाग आपके हाथों में है। यह हमारे नबी हज़रत मुहम्मद *(सल्ल.)* के दूसरे प्यारे ख़लीफ़ा हज़रत उमर फ़ारूक़ *(रज़ि.)* की ज़िन्दगी के हालात से मुताल्लिक़ है। इसकी तरतीब में भी उन ही बातों का ख़याल रखा गया है जिनका ख़याल पहले भाग में रखा गया था, यानी आसान ज़बान। अल्लाह से उम्मीद है कि पहले हिस्से की तरह यह हिस्सा भी पढ़नेवालों के लिए फ़ायदेमन्द साबित होगा।

इस किताब की तरतीब में निम्नलिखित किताबों से मदद ली गई है।

1.	अल-फ़ारूक़	लेखक- अल्लामा शिबली नोमानी प्रकाशक- कुतुबख़ाना रशीदिया, दिल्ली
2.	ख़ुलफ़ाए-राशिदीन	लेखक- मौलाना मुईनुद्दीन नदवी प्रकाशक- दारुल-मुसन्निफ़ीन, आज़मगढ़
3.	तारीख़े-मिल्लत (भाग-2)	लेखक- क़ाज़ी ज़ैनुल आबिदीन मेरठी प्रकाशक- नदवतुल-मुसन्निफ़ीन, दिल्ली
4.	उमर फ़ारूक़े-आज़म	लेखक- मुहम्मद हुसैन हैकल प्रकाशक- मक्तबा जदीद, लाहौर
5.	सीरत ख़ुलफ़ाए-राशिदीन	लेखक- मौलाना अब्दुश्शकूर साहब फ़ारूक़ी

इरफ़ान ख़लीली

24, दिसम्बर 1990 ई.

कुछ अल्फ़ाज़ का मतलब

इस किताब में कुछ ऐसे अल्फ़ाज़ आएंगे, जिनको मुख़्तसर शक्ल में लिखा गया है। किताब पढ़ने से पहले ज़रूरी है कि उन अल्फ़ाज़ की मुकम्मल शक्ल और मतलब समझ लिया जाए, ताकि किताब पढ़ते वक़्त कोई परेशानी न हो। ऐसे अल्फ़ाज़ ये हैं :

अलैहि॰ : इसकी मुकम्मल शक्ल है, **'अलैहिस्सलाम'** यानी 'उन पर सलामती हो!' नबियों और फ़रिश्तों के नाम के साथ आदर और प्रेम सूचक ये शब्द बढ़ा देते हैं।

रज़ि॰ : इसका पूर्ण रूप है, **'रज़ियल्लाहु अन्हु'** इसके मानी हैं, 'अल्लाह उनसे राज़ी हो!' **'सहाबी'** के नाम के साथ यह आदर और प्रेम सूचक दुआ बढ़ा देते हैं।

'सहाबी' उस ख़ुश क़िस्मत मुसलमान को कहते हैं, जिसे नबी (सल्ल॰) से मुलाक़ात का मौक़ा मिला हो। **सहाबी** का बहुवचन सहाबा है स्त्रीलिंग **सहाबिया** है।

रज़ि॰ अगर किसी सहाबिया के नाम के साथ इस्तेमाल हुआ हो तो **रज़ियल्लाहु अन्हा** पढ़ते हैं और अगर **सहाबा** के लिए आए तो **रज़ियल्लाहु अन्हुम** कहते हैं।

सल्ल॰ : इसका पूर्ण रूप है, **'सल-लल-लाहु अलैहि वसल्लम'** जिसका मतलब है, 'अल्लाह उनपर रहमत और सलामती की बारिश करे!' हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का नाम लिखते, लेते या सुनते हैं तो आदर और प्रेम के लिए दुआ के ये शब्द बढ़ा देते हैं।

नाम और ख़ानदान

प्यारे नबी *(सल्ल.)* के दूसरे ख़लीफ़ा का असल नाम उमर *(रज़ि.)* था। कुन्यत अबू-हफ़्स और लक़ब फ़ारूक़े-आज़म था। फ़ारूक़ के मानी हैं अच्छाई और बुराई में फ़र्क़ करनेवाला।

इनके वालिद (बाप) का नाम ख़त्ताब था जो नुफ़ैल बिन-अब्दुल-उज़्ज़ा के बेटे थे। माँ ख़ुनतुम थीं जो हिश्शाम-बिन-मुग़ीरा की बेटी थीं। उनका ताल्लुक़ क़ुरैश के मशहूर क़बीले बनू-अदी से था। उनका ख़ानदानी सिलसिला आठवीं पीढ़ी में प्यारे नबी *(सल्ल.)* से मिल जाता है। यों समझिए कि हमारे नबी *(सल्ल.)* और उमर *(रज़ि.)* दोनों एक ही ख़ानदान से थे।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के वालिद अपने क़बीले बनू-अदी के सरदार थे। क़ुरैश उनकी बहुत इज़्ज़त करते थे। आपस में जब कोई झगड़ा हो जाता था या कोई और मामला होता तो उसे तय कराने के लिए उन ही के पास भेजा जाता था।

पैदाइश और बचपन

हज़रत उमर फ़ारूक़ *(रज़ि.)* 582 ई॰ में शहर मक्का में पैदा हुए थे। जब उनका जन्म हुआ तो क़बीलेवालों ने बहुत खुशियाँ मनाईं। हज़रत उमर *(रज़ि.)* प्यारे नबी *(सल्ल.)* से लगभग साढ़े ग्यारह साल छोटे थे।

अरब के दस्तूर के मुताबिक़ हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने भी ऊँट चराए थे। उनके वालिद का मिज़ाज बहुत सख़्त था, इसलिए वे उनके साथ भी सख़्ती से पेश आते थे। ऊँट चराते-चराते थक जाते और सुस्ताने के लिए बैठ जाते तो उनके वालिद उनको मारा करते थे। सख़्ती के बर्ताव से यह फ़ायदा हुआ कि वे बहादुर और मेहनती बन गए। सुस्ती और काहिली उनमें ज़रा भी न थी।

उन्हें बचपन से कुश्ती लड़ने का बेहद शौक़ था। उन्होंने अखाड़े में जाकर कुश्ती का फ़न (कला) बाक़ायदा सीखा था।

जवानी के खेल

जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* बड़े हुए तो लिखना-पढ़ना शुरू किया और बहुत जल्द लिख-पढ़ गए। उस वक़्त क़ुरैश के क़बीले में सिर्फ़ सतरह, अठारह आदमी पढ़े-लिखे थे, उनमें से एक उमर *(रज़ि.)* भी थे। उन्होंने तक़रीर में बड़ा कमाल हासिल किया।

अरफ़ात के पहाड़ के पास उकाज़ नामक एक स्थान था। वहाँ हर साल मेला लगता था। हर फ़न के माहिर वहाँ अपने-अपने कमाल दिखाया करते थे। हज़रत उमर *(रज़ि.)* भी वहाँ के तक़रीरी मुक़ाबलों में हिस्सा लेते और कामयाब होते थे। कुश्ती के फ़न में तो उनकी धाक बैठी हुई थी। दंगल में कुश्ती के ऐसे-ऐसे करतब दिखाते थे कि देखनेवाले दंग रह जाते थे। घोड़े की सवारी में भी इन्हें काफ़ी महारत हासिल थी। नंगी पीठ पर बिना ज़ीन कसे हुए मीलों चले जाते थे और कोई थकान महसूस नहीं करते थे। मेले के ज़माने में घुड़-दौड़ के मुक़ाबले में भी वे शरीक होते थे और कामयाबी हासिल करते थे।

मुख़्तसर यह कि हज़रत उमर *(रज़ि.)* हर फ़न में माहिर थे। अल्लाह उनके दरजे बुलन्द करे।

तिजारत भी की

मक्का के ज़्यादातर लोग व्यापार किया करते थे इसलिए हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने भी अपनी गुज़र-बसर के लिए इसी पेशे को अपनाया। इस सिलसिले में उन्होंने बहुत दूर-दूर का सफ़र किया। वे जिस देश में जाते वहाँ के बड़े-बड़े लोगों से मुलाक़ातें करते। हर मामले में विचारों का आदान-प्रदान करते। ख़ास तौर पर वहाँ के रहनेवालों के रहन-सहन और तौर तरीक़ों को बड़ी गहरी नज़र से देखते और तिजारती लेन-देन भी करते। इसी वजह से समझ-बूझ अक़्लमन्दी, तजरिबेकारी, हौसले की बुलन्दी और मामलों की गहराई तक पहुँचने की सलाहियतें इनमें में उजागर हो गईं। मुश्किल से मुश्किल गुत्थी भी वे बहुत आसानी से सुलझा दिया करते थे। यही ख़ूबियाँ आगे चलकर इनके बहुत काम आईं।

अपने वालिद की तरह चूँकि मिज़ाज में सख़्ती बहुत थी इसलिए तिजारत में अधिक कामयाबी न मिली।

इस्लाम से दुश्मनी

हज़रत उमर *(रज़ि.)* की उम्र जब लगभग 27 वर्ष थी तब प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने हक़ की आवाज़ मक्का में बुलन्द की। भला यह आवाज़ हज़रत उमर *(रज़ि.)* को कैसे पसन्द आती। वे तो अपने बाप-दादा के दीन के ख़िलाफ़ एक शब्द भी सुनना गवारा न कर सकते थे। वही हुआ कि वे इस्लाम के मुख़ालिफ़ बन गए। जब सुनते कि कोई आदमी मुसलमान हो गया है तो हाथ धोकर उसके पीछे पड़ जाते। उसको सताने और उसे पीड़ा पहुँचाने में कोई कसर उठा न रखते।

एक दिन हज़रत उमर *(रज़ि.)* एक लौंडी को मुसलमान होने के जुर्म में बुरी तरह मार रहे थे। पहले तो उसे डाँट-डपटकर इस्लाम छोड़ देने के लिए कहा लेकिन जब वह किसी तरह इसपर तैयार न हुई तो अब उसे बुरी तरह से मारना शुरू कर दिया। वह बेचारी तड़प रही थी लेकिन इस्लाम को छोड़ देने के लिए किसी तरह तैयार नहीं थी। आख़िरकार उमर *(रज़ि.)* ख़ुद मारते-मारते थक गए। हाथ रोक लिया और बोले "यह न समझ कि मैंने तुझे छोड़ दिया है ज़रा सुसता लूँ फिर पूछूँगा।" इत्तिफ़ाक़ की बात हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* का उधर से गुज़र हुआ। यह मंज़र उनसे न देखा गया। तरस खाकर उस लौंडी को ख़रीद लिया और फिर आज़ाद कर दिया। इस तरह अल्लाह ने उस बेचारी की जान बचा ली।

प्यारे नबी *(सल्ल०)* की दुआ

हज़रत उमर *(रज़ि०)* की इस्लाम से दुश्मनी बढ़ती ही जा रही थी। वे मुसलमानों को ऐसी-ऐसी तकलीफ़ें पहुँचाते कि बस तौबा ही भली। सताने के नित नए तरीक़े निकालते। लेकिन ख़ुदा की शान देखिए कि जो भी मुसलमान हो जाता वह ये सब पीड़ाएँ तो किसी न किसी तरह सहन कर लेता मगर इस्लाम को छोड़ने के लिए किसी तरह तैयार न होता। डंके की चोट पर अपने मुसलमान होने का ऐलान करता। उनकी यह हिम्मत और बहादुरी देखकर हज़रत उमर *(रज़ि०)* और चिढ़ जाते।

इधर सहाबा *(रज़ि०)* की तकलीफ़ें और उनका बुरा हाल देखकर प्यारे नबी *(सल्ल०)* को बहुत दुख पहुँचता। मगर आप *(सल्ल०)* का बस नहीं चलता था। आख़िर क्या कर सकते थे। कोई सुनने के लिए तैयार भी तो न था। अलबत्ता अल्लाह से मुसलमानों के हक़ में दुआएँ करते रहते थे। अब तो मुसलमान भी अबू-जह्ल और हज़रत उमर *(रज़ि०)* के रवैये से बहुत तंग आ चुके थे। आख़िरकार एक दिन नबी *(सल्ल०)* ने अल्लाह से बहुत ही गिड़गिड़ाकर दुआ की। आपने फ़रमाया :

> "ऐ अल्लाह! ऐ मेरे अल्लाह! इस्लाम को अम्र-बिन -हिश्शाम (अबू-जह्ल) या उमर-इब्ने-ख़त्ताब के ज़रीए इज़्ज़त अता फ़रमा।"

आख़िर जोश आ गया

प्यारे नबी *(सल्ल॰)* को हक़ का ऐलान करते हुए लगभग छः साल बीत चुके थे। अल्लाह का दीन ख़ामोशी के साथ धीरे-धीरे फैल रहा था। यह देखकर तो मक्का के सरदार और भी बौखला उठे। एक दिन उन्होंने एक जलसा किया। सबने बड़ी जोशीली तक़रीरें कीं। सबकी तान इसी जुमले पर टूटती कि "जब तक मुहम्मद का ख़ातिमा नहीं कर दिया जाएगा मक्कावालों को चैन और सुकून की ज़िन्दगी नसीब नहीं हो सकती।" सबने तक़रीरों को ग़ौर से सुना। सब झूम-झूमकर सिर हिलाते रहे लेकिन जब पूछा गया कि इस काम के लिए कौन-कौन तैयार है तो ऐसा मालूम हुआ कि जैसे सबको साँप सूँघ गया हो। हर ओर सन्नाटा छा गया। उसी जलसे में उमर-इब्ने-ख़त्ताब *(रज़ि॰)* भी मौजूद थे। यह कम हिम्मती देखकर उन्हें जोश आ गया। नंगी तलवार लेकर उठ खड़े हुए और बोले-

"मैं मुहम्मद *(सल्ल॰)* को क़त्ल करूँगा (तौबा-तौबा)।"

यह गरजदार आवाज़ सुनकर सब चौंक पड़े। अबू-जह्ल जो उनका मामा था खड़ा हो गया और पीठ ठोंक कर बोला, "शाबाश बेटे! मुझे तुमसे यही उम्मीद थी। अब अगर तुम कामयाब लौटे तो हम लोग तुमको सौ ऊँट और चालीस हज़ार दिरहम नक़द इनाम देंगे।"

उमर इब्ने-ख़त्ताब *(रज़ि॰)* नंगी तलवार हाथ में लिए हुए नबी *(सल्ल॰)* के मकान की तरफ़ रवाना हो गए।

दुआ का असर

उमर-बिन-ख़त्ताब *(रज़ि.)* ग़ुस्से में भरे चले जा रहे थे। रास्ते में नईम-बिन-अब्दुल्लाह *(रज़ि.)* मिल गए। पूछा, "उमर! ख़ैर तो है, कहाँ का इरादा है?" उमर बोले, "मुहम्मद *(सल्ल.)* का फ़ैसला करने जा रहा हूँ।" नईम ने कुछ सोचकर कहा, "पहले अपने घर की ख़बर लो। तुम्हारी बहन और बहनोई दोनों मुसलमान हो चुके हैं।" यह सुनकर उमर ग़ुस्से से काँपते हुए बहन के घर पहुँचे। वे दोनों मियाँ-बीवी क़ुरआन मजीद पढ़ रहे थे। भाई को देखकर बहन ने क़ुरआन के पृष्ठ छिपा दिए। जाते ही उमर इब्ने-ख़त्ताब ने कहा, "मैंने सुना है तुम दोनों मुसलमान हो गए हो।" इतना कहकर और जवाब का इन्तिज़ार किए बिना दोनों को मारना शुरू कर दिया और फिर इतना मारा, इतना मारा की लहूलुहान कर दिया। आख़िरकार बहन को भी जोश आ गया। कड़क कर बोलीं, "उमर! चाहे तुम हमें मार ही क्यों न डालो लेकिन इस्लाम अब दिल से नहीं निकल सकता।" बहन का यह जुमला भाई के दिल पर बिजली बनकर गिरा और उनका उठा हुआ हाथ रुक गया। बहन की तरफ़ मुहब्बत भरी नज़र से देखा। जिस्म से ख़ून रिस रहा था। बहन की मुहब्बत ने ग़ुस्से पर क़ाबू पा लिया। पहले तो कुछ सोचने लगे, फिर बोले, "तुम लोग क्या पढ़ रहे थे, मुझे भी दिखाओ।"

बहन ने कलाम पाक (क़ुरआन) के पृष्ठ भाई के सामने रख दिए। उन्होंने उनको पढ़ना शुरू कर दिया। जैसे-जैसे वे पढ़ते जाते थे, उनके चेहरे की रंगत बदलती जाती थी। यहाँ तक कि उनकी आँखें डबडबा आईं और होंठ हिलने लगे।

"कितनी सच्ची और अच्छी बातें लिखी हैं!", यह प्यारे नबी *(सल्ल.)* की दुआ का असर था।

अल्लाह फ़रमाता है :

"मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दुआएँ क़बूल करूँगा"
(क़ुरआन)

"दुआ मोमिन का हथियार है, दीन का सुतून है और आसमान व ज़मीन का नूर है।" (हदीस)

अल्लाहु-अकबर

हज़रत उमर *(रज़ि.)* बहन के घर से सीधे अरक़म के घर की तरफ़ रवाना हो गए, जो सफ़ा पहाड़ी के दामन में बना हुआ था। मक्का के मुशरिकों के ज़ुल्म-व-सितम से तंग आकर प्यारे नबी *(सल्ल.)* मुसलमानों के साथ वहीं पनाह लिए हुए थे। जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* को नंगी तलवार हाथ में लिए हुए अपनी तरफ़ आते देखा तो मुसलमान बहुत घबराए। हज़रत हमज़ा *(रज़ि.)* ने यह कहकर तसल्ली दी कि "आने दो, अगर अच्छे इरादे से आ रहे हैं तो बड़ी ख़ुशी की बात है और अगर बुरे इरादे से आ रहे हैं तो उन ही की तलवार से उनकी गरदन उड़ा दूँगा।"

जैसे ही दरवाज़े पर आए, दरवाज़ा खोल दिया गया, ख़ुद प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने आगे बढ़कर पूछा "क्यों उमर! किस इरादे से आए हो?"

नबी *(सल्ल.)* की रोबदार आवाज़ सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* काँप उठे और थरथराती हुई आवाज़ में कहा, "ईमान लाने के लिए।"

यह सुनते ही प्यारे नबी *(रज़ि.)* की ज़बान से 'अल्लाहु-अकबर' निकल गया और फिर सभी सहाबा *(रज़ि.)* ने मिलकर इस ज़ोर से 'अल्लाहु-अकबर' का नारा लगाया कि मक्का की पहाड़ियाँ इस नारे से गूँज उठीं।

मुसलमानों में ख़ुशी की एक लहर दौड़ गई।

फ़ारूक़ का लक़ब

अब तक मुसलमान छिप-छिपकर नमाज़ें अदा करते थे। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने प्यारे नबी *(सल्ल.)* से कहा, "जब हम हक़ पर हैं तो फिर छिपकर नमाज़ें क्यों पढ़ें? क्यों न ऐलान के साथ काबा में नमाज़ अदा करें?"

प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने इस मशवरे को क़बूल फ़रमा लिया। सभी मुसलमान एक क़ाफ़िले की शक्ल में ख़ान-ए-काबा की ओर रवाना हो गए। आगे-आगे प्यारे नबी *(सल्ल.)*, आपके दाईं ओर हज़रत हमज़ा *(रज़ि.)* नंगी तलवारें हाथों में लिए चल रहे थे। काबा में पहुँचकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने अपने मुसलमान होने का ऐलान किया और फिर ऊँची आवाज़ में कहा, "हम यहाँ नमाज़ पढ़ने आए हैं जिसे अपने लड़के यतीम और बीवियाँ बेवा (विधवा) करानी हों वह हमें रोक ले।"

यह ऐलान सुनकर वहाँ जो मुशरिक मौजूद थे उनको जैसे साँप सूँघ गया। ख़ामोश खड़े मुँह तकते रहे। मुसलमानों ने इत्मीनान से नमाज़ पढ़ी और फिर वापस आ गए।

प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने खुश होकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* को 'फ़ारूक़' का लक़ब अता किया, यानी हक़ और बातिल में फ़र्क़ करनेवाला।

देखा आपने, कितने बहादुर थे हज़रत उमर फ़ारूक़ *(रज़ि.)*! अल्लाह उनसे राज़ी हो।

हिजरत (प्रस्थान)

मुसलमान होने के बाद छः, सात साल तक हज़रत उमर *(रज़ि.)* ख़ुद मक्कावालों के ज़ुल्म व सितम सहते रहे और सब्र करते रहे। काफ़िरों ने भी मुसलमानों को सताने में कोई कसर उठा न रखी। आख़िरकार अल्लाह ने मदीना हिजरत कर जाने की इजाज़त दे दी। प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने यह हुक्म सभी सहाबा *(रज़ि.)* को सुनाकर यह फ़रमा दिया कि "एक-एक, दो-दो करके ख़ामोशी के साथ मदीना चले जाओ, बाद में मैं भी आ जाऊँगा।"

सहाबा *(रज़ि.)* ने इस हुक्म पर काम करना शुरू कर दिया और ख़ामोशी के साथ मदीना जाने लगे। मक्का से जो भी मुसलमान मदीना हिजरत के लिए निकलता उसको मक्कावाले बहुत सताते। इसलिए मुसलमान छिप-छिपकर मदीना को हिजरत कर रहे थे। जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* की बारी आई तो भला आप छिप-छिपाकर कैसे जा सकते थे। यह बात तो आपके मिज़ाज के ख़िलाफ़ थी। आप तैयार हुए। सीधे काबा गए, वहाँ तवाफ़ किया, नमाज़ पढ़ी, फिर मुशरिकों से मुख़ातिब हुए, "ऐ क़ुरैश के लोगो! मैं तुम्हारे शहर से जा रहा हूँ। मेरे साथ मेरे भाई, भतीजे, दामाद और दोस्त हैं। अगर तुममें हिम्मत हो तो मुझे रोक कर देख लो।"

सब हज़रत उमर *(रज़ि.)* का मुँह तकते रह गए। किसी में हिम्मत न हुई कि आपको रोक सके। वे उनके बीच से गुज़रते हुए मदीना की तरफ़ रवाना हो गए।

कुछ दिनों के बाद प्यारे नबी *(सल्ल.)* ख़ुद हिजरत करके मदीना पहुँच गए।

अज़ान का तरीक़ा

जब प्यारे नबी *(सल्ल०)* मदीना पहुँच गए तो एक दिन यह मसला सामने आया कि नमाज़ के लिए मुसलमानों को किस तरह मस्जिद में जमा किया जाए। लोगों ने तरह-तरह के मशवरे दिए। किसी ने कहा शंख बजाया जाए। कोई बोला कि किसी ऊँची जगह पर आग जला दी जाया करे। आख़िर में हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने फ़रमाया कि हर नमाज़ के वक़्त कोई आदमी ज़ोर से लोगों को नमाज़ की तरफ़ बुलाया करे। यह तजवीज़ नबी *(सल्ल०)* को बहुत पसन्द आई। फिर हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने कहा, "मैंने ख़ाब में देखा है कि कोई शख़्स इस तरह पुकार रहा है— अल्लाहु-अकबर, अल्लाहु-अकबर....." ये वही अलफ़ाज़ थे जो आजकल हम अज़ान में पढ़ते हैं।

अल्लाह के रसूल *(सल्ल०)* ने हज़रत बिलाल *(रज़ि०)* को बुलाया और उन ही अलफ़ाज़ में अज़ान देने का हुक्म दिया। उस वक़्त से अब तक नमाज़ के ऐलान का यह तरीक़ा चला आ रहा है और रहती दुनिया तक रहेगा।

नबी *(सल्ल.)* से मुहब्बत

इस्लाम क़बूल करने से पहले हज़रत उमर *(रज़ि.)* इस्लाम के जितने कट्टर दुश्मन थे, मुसलमान होने के बाद वे उससे उतनी ही ज़्यादा मुहब्बत करने लगे। तन, मन, धन हर तरीक़े से इस्लाम की ख़िदमत करने के लिए तैयार रहते थे।

दीन फैलाने के लिए अगर रुपये-पैसे की ज़रूरत पड़ती तो आप दिल खोलकर ख़र्च करते थे। काफ़िरों और मुशरिकों के साथ नबी *(सल्ल.)* की जितनी भी लड़ाइयाँ हुईं हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने हर एक में बढ़-चढ़कर हिस्सा लिया और इस्लाम की ख़ातिर अपनी जान तक की परवाह न की।

ज़रा सोचिए तो! एक वह ज़माना था जब उमर-इब्ने-ख़त्ताब *(रज़ि.)* नंगी तलवार लेकर प्यारे नबी *(सल्ल.)* को (तौबा-तौबा) क़त्ल करने के लिए निकले थे। एक यह ज़माना है कि अपनी जान देना गवारा है मगर यह गवारा नहीं कि नबी *(सल्ल.)* के मुबारक पैर में एक काँटा भी चुभ जाए।

अगर कोई मुशरिक प्यारे नबी *(सल्ल.)* से बद तमीज़ी से बात करता था तो हज़रत उमर *(रज़ि.)* का चेहरा ग़ुस्से से लाल हो जाता था और उसे क़त्ल करने के लिए तैयार हो जाते थे।

देखा, कितनी मुहब्बत थी हज़रत उमर *(रज़ि.)* को प्यारे नबी *(सल्ल.)* के साथ!

दिल की मुराद पूरी हुई

हज़रत उमर *(रज़ि.)* की एक लड़की हज़रत हफ़सा *(रज़ि.)* थीं। आप उनसे बहुत मुहब्बत करते थे इसी वजह से आपने अपनी कुन्यत अबू-हफ़स रखी थी। हज़रत हफ़सा *(रज़ि.)* की पहली शादी हज़रत खुनैस-बिन-हुज़ाफ़ा *(रज़ि.)* से हुई थी। ये भी प्यारे नबी *(सल्ल.)* के सहाबी थे और हज़रत उमर *(रज़ि.)* के साथ ही हिजरत करके मदीना आ गए थे। उहुद की लड़ाई में वे बहुत बहादुरी से लड़ते हुए अल्लाह को प्यारे हो गए। हज़रत हफ़सा *(रज़ि.)* बेवा (विधवा) हो गईं।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* को उनके बेवा होने का बहुत दुख हुआ। वे जल्द से जल्द उनकी दूसरी शादी कर देना चाहते थे। प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने उनसे शादी का पैग़ाम दिया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* इस पैग़ाम से बहुत ख़ुश हुए जैसे दिल की मुराद पूरी हो गई हो। उसी साल यानी सन् 3 हिजरी में हज़रत हफ़सा *(रज़ि.)* का प्यारे नबी *(सल्ल.)* से निकाह हो गया।

हज़रत हफ़सा *(रज़ि.)* की गिनती उम्मत की माओं में होने लगी।

सबसे पहला वक़्फ़

7 हिजरी में ख़ैबर के यहूदियों के साथ मुसलमानों की बड़ी घमासान की लड़ाई हुई। उस जंग में हज़रत उमर *(रज़ि.)* भी शरीक थे। वे बड़ी बहादुरी से लड़े। यहूदियों ने अपनी पूरी ताक़त लगा दी, मगर मुसलमानों के सामने टिक न सके। उन्हें मुँह की खानी पड़ी। क़िले का हाकिम मरहब भी मारा गया। लड़ाई ख़त्म हो गई। ख़ैबर पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया।

प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने ख़ैबर की ज़मीन मुजाहिदों में बाँट दी। हज़रत उमर *(रज़ि.)* को भी इस ज़मीन का एक हिस्सा मिला। जिसका नाम समग़ था। उन्होंने उसे अल्लाह की राह में दे दिया और उसकी आमदनी दीन फैलाने के कामों में ख़र्च होने लगी।

देखा आपने हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने इस्लाम की कितनी बड़ी ख़िदमत अंजाम दी। यह सबसे पहला वक़्फ़ था जो अल्लाह की राह में किया गया था।

तक़रीर का जादू

वक़्त बीतता गया। आख़िर वह दिन आ गया जब प्यारे नबी *(सल्ल०)* इस दुनिया से चले गए। यह ख़बर सुनते ही पहले तो हज़रत उमर *(रज़ि०)* अपने हवास खो बैठे और मस्जिदे-नबवी में जाकर यह ऐलान कर दिया कि "अगर किसी ने यह कहा कि नबी *(सल्ल०)* दुनिया से चल बसे हैं, तो मैं उसे क़त्ल कर दूँगा।" लेकिन हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि०)* के समझाने से उन्हें होश आ गया और उनके साथ सक़ीफ़ा बनी-साइदह की तरफ़ रवाना हो गए।

शैतान के बहकाने से वहाँ यह झगड़ा उठ खड़ा हुआ कि नबी *(सल्ल०)* का ख़लीफ़ा अनसारियों में से हो या मुहाजिरों में से। हालात बिगड़ रहे थे और यह डर था कि कहीं आपस ही में जंग न छिड़ जाए। इन दोनों बुज़ुर्गों ने वहाँ पहुँचकर हालात को समझा-बूझा और फिर हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने ऐसी तक़रीर की कि देखते-देखते पाँसा पलट गया। सबका जोश ठंडा पड़ गया। मौक़ा ग़नीमत जानकर हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने फ़ौरन ही हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि०)* के हाथ पर ख़िलाफ़त की बैअत कर ली। फिर क्या था, सबने हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि०)* को अपना ख़लीफ़ा मान लिया और उनके हाथ पर बैअत करने लगे।

सच है तक़रीर में जादू होता है।

ख़लीफ़ा हो गए

हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* की ख़िलाफ़त सिर्फ़ सवा दो साल रही। इस मुद्दत में जितने बड़े-बड़े काम हुए सभी में हज़रत उमर *(रज़ि.)* का मशवरा ज़रूर रहता। हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* कोई नया काम बिना उनसे राय लिए नहीं करते थे। इस तरह हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* को इत्मीनान हो गया कि उनके बाद ख़िलाफ़त के लिए सबसे मुनासिब आदमी हज़रत उमर *(रज़ि.)* ही थे।

जब हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* बीमार पड़े और हालत बिगड़ने लगी तो उन्होंने कुछ और सहाबा *(रज़ि.)* से मशवरा करने के बाद हज़रत उमर *(रज़ि.)* को ख़लीफ़ा चुन लिया और अल्लाह से दुआ की कि उनके मिज़ाज में नरमी पैदा कर दे।

कुछ दिनों के बाद 23 जुमादुस्सानी 13 हिजरी (मुताबिक़ 24 अगस्त 634 ई.) सोमवार के दिन हज़रत अबू-बक्र सिद्दीक़ *(रज़ि.)* का इन्तिक़ाल हुआ। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन। इसके बाद हज़रत उमर *(रज़ि.)* ख़लीफ़ा बना दिए गए।

ख़लीफ़ा होते ही सबसे पहले आप *(रज़ि.)* ने उन कामों की तरफ़ तवज्जुह की जो हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* ने शुरू कर रखे थे और अभी पूरे नहीं हुए थे।

ईरान पर हमला

हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* के ज़माने ही में ईरान, इराक़ और शाम (सीरिया) की लड़ाइयाँ शुरु हो चुकी थीं। मुसलमानों को बराबर फ़तह हासिल हो रही थी और शहर पर शहर क़ब्ज़े में आ रहे थे। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने भी यह सिलसिला जारी रखा। इस्लामी फ़ौजें बराबर आगे बढ़ रही थीं। ईरान के ख़िलाफ़ जो फ़ौज लड़ रही थी उसके सिपह-सालार हज़रत मुसन्ना-बिन-हारिसा *(रज़ि.)* थे जो एक लड़ाई में ज़ख़्मी हो गए थे। इत्तिफ़ाक़ से उनका घाव बढ़ता गया और वे अल्लाह को प्यारे हो गए। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन! हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उनके स्थान पर हज़रत साद-बिन-अबी-वक़्क़ास *(रज़ि.)* को, जो बड़े दर्जे के सहाबी और प्यारे नबी *(सल्ल.)* के मामूँ थे, सिपह-सालार मुक़र्रर किया और क़ादसिया की तरफ़ रवाना कर दिया। क़ादसिया ईरान का दरवाज़ा समझा जाता था यानी क़ादसिया पर क़ब्ज़ा होने के बाद पूरे ईरान का फ़तह हो जाना आसान था। इसलिए ईरान के राजा यज़्दगर्द ने अपने बहादुर अफ़सर रुस्तम को ईरानी सेना का सेनापति बनाया और एक लाख 20 हज़ार सेना देकर मुसलमानों से मुक़ाबले के लिए भेज दिया। जब इसकी ख़बर हज़रत उमर *(रज़ि.)* को हुई तो आपने हज़रत साद *(रज़ि.)* को ख़ास तौर से हिदायत फ़रमाई कि लड़ाई शुरू करने से पहले एक वफ़्द ईरानी राजा के पास भेजा जाए जो पहले सुलह की बात-चीत करे अगर वह न माने तो मजबूरन जंग की जाए।

एक टोकरा मिट्टी

हज़रत साद-बिन-अबी-वक़्क़ास *(रज़ि.)* ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* के हुक्म के मुताबिक़ चार लोगों का एक वफ़्द ईरान के राजा के पास भेजा। जिसमें नोमान-बिन-मुक़रन, मुसन्ना-बिन-हारिसा *(रज़ि.)*, मुग़ीरा-बिन-शाबा *(रज़ि.)* और आसिम-बिन-अम्र *(रज़ि.)* शामिल थे। जब ये लोग मदाइन पहुँचे तो ईरानी लोग उनकी सादगी और साज़ो-सामान की कमी देखकर बड़ी हैरत से एक दूसरे से पूछते थे। "क्या यही लोग हमारे राजा से टक्कर लेने आए हैं?"

इन लोगों को ईरान के राजा, यज़्दगर्द, के सामने पेश किया गया। उसने बड़ी हिक़ारत से उनपर नज़र डाली और पूछा, "तुम यहाँ क्यों आए हो?" वफ़्द के एक आदमी ने पहले तो दीन की तालीम उसके सामने पेश की और फिर कहा कि "अगर आप इस दीन को क़बूल कर लें तो हम आपको अपना भाई बना लेंगे। और अगर यह मंज़ूर न हो तो जिज़्या देने का इक़रार कर लें हम आप से सुलह कर लेंगे और अगर यह भी पसन्द न हो तो फिर हमारे बीच तलवार फ़ैसला करेगी।"

यह सुनकर यज़्दगर्द ग़ुस्से से बेक़ाबू हो गया। हुक्म दिया कि मिट्टी का एक टोकरा लाया जाए और उनमें जो सबसे इज़्ज़तवाला है उसके सिर पर रखकर सबको मदाइन से निकाल बाहर किया जाए।

ऐसा ही किया गया वफ़्दवाले बहुत ख़ुश-ख़ुश वह टोकरा लिए हुए क़ादसिया पहुँचे और हज़रत साद-बिन-अबी-वक़्क़ास *(रज़ि.)* के सामने उसे रखकर कहने लगे। "मुबारक हो! दुश्मन ने ख़ुद अपनी ज़मीन हमारे हवाले कर दी है।"

मुसलमान बहुत ख़ुश थे लेकिन जब इस घटना की ख़बर रुस्तम को हुई तो वह इसे बद शगूनी समझा और अपने महाराजा को बुरा-भला कहने लगा।

रुस्तम मारा गया

मुसलमानों की फ़तह की ख़बरें सुन-सुनकर रुस्तम दिल ही दिल में बहुत घबरा रहा था। उधर ईरान का राजा लड़ाई छेड़ देने का बराबर तक़ाज़ा कर रहा था लेकिन रुस्तम बराबर टाल-मटोल किए जाता था। आख़िरकार मजबूर होकर रुस्तम को जंग शुरू करनी ही पड़ी।

क़ादसिया की यह लड़ाई तीन दिन तक चलती रही। दो दिन तक तो कोई फ़ैसला न हो सका क्योंकि ईरानी सेना में आगे-आगे हाथियों की एक बड़ी संख्या थी जिनको देखकर मुसलमान सिपाहियों के घोड़े बिदक जाते थे। आख़िरकार यह तय पाया कि तीरों से हाथियों की आँखें फोड़ दी जाएँ और फिर उनकी सूँडें काट दी जाएँ तो ये भाग खड़े होंगे।

तीसरे दिन ऐसा ही किया गया। सबसे बड़ा हाथी जो आगे-आगे था, पहले उसकी आँखें फोड़ी गईं फिर एक सिपाही ने लपककर उसकी सूँड काट दी। अब तो हाथी बौखला कर भागा। फिर क्या था, सारे के सारे हाथी उसके पीछे हो लिए। मैदान साफ़ हो गया। मौक़ा देखकर मुसलमानों ने भी ऐसा हमला किया कि ईरानी सेना उसको सहन न कर सकी और मैदान छोड़कर भाग खड़ी हुई। रुस्तम भी जान बचाकर भागा। सामने नहर थी उसमें कूद गया। हिलाल नामक मुसलमान सिपाही ने उसे देखकर पहचान लिया। वह भी नहर में कूद पड़ा। रुस्तम की टाँगें पकड़कर बाहर खींच लाया और तलवार से उसका काम तमाम कर दिया।

इस तरह क़ादसिया पर भी फ़तह हासिल कर ली गई और ईरानियों को बहुत ज़बरदस्त जानी और माली नुक़सान उठाना पड़ा।

दरिया में घोड़े दौड़ा दिए

क़ादसिया के बाद अब मदाइन की बारी थी। यह ईरान की राजधानी थी। ईरानी सेनाएँ यहाँ जमा होने लगीं। हज़रत साद-बिन-अबी-वक़्क़ास *(रज़ि.)* ने भी हिम्मत नहीं हारी। इस्लामी फ़ौज लेकर 'बहरे-शीर' पहुँच गए जो मदाइन का एक भाग था। दोनों फ़ौजों के बीच दरिया ठाठें मार रहा था। एक किनारे पर मुसलमान थे और दूसरे पर ईरानी फ़ौज दीवार की तरह सफ़ें बाँधे खड़ी थी।

अब दरिया पार करने का सवाल था। हज़रत साद *(रज़ि.)* ने फ़ौज की तरफ़ रुख़ करके पुकारा, "है कोई जो दरिया को पार करे?"

इस आवाज़ पर हज़रत आसिम-बिन-उमर *(रज़ि.)* अपने साठ साथियों के साथ आगे बढ़े और अल्लाह का नाम लेकर दरिया में कूद गए। उनके पीछे हज़रत क़अक़ाअ-बिन-अम्र *(रज़ि.)* और उनके छः सौ साथियों ने भी अपने घोड़े दरिया में डाल दिए। घोड़े इस तरह तैर रहे थे जैसे वे सचमुच तैरनेवाले जानवर हों। यह तमाशा देखकर ईरानियों के होश उड़ गए। जैसे ही इस्लामी फ़ौज दरिया के दूसरे किनारे पर पहुँची, ईरानी फ़ौज मारे डर के "देव आ गए, देव आ गए" कहती हुई भाग खड़ी हुई।

मदाइन बिल्कुल ख़ाली हो गया। क़िलेवालों ने जिज़्या देना क़बूल कर लिया। इस तरह बिना लडे हुए मदाइन पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया। माले-ग़नीमत में बेशुमार दौलत हाथ आई। जो फ़ौजियों में बाँट दी गई और पाँचवा हिस्सा मदीना के बैतुलमाल में भेज दिया गया।

इसी बात की तरफ़ अल्लामा इक़बाल *(रह.)* ने इस शेर में इशारा किया है—

दश्त तो दश्त हैं, दरिया भी न छोड़े हमने।
बहरे-ज़ुलमात में दौड़ा दिए घोड़े हम ने।।

नहावन्द की लड़ाई

जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* को यह सूचना मिली कि ईरानी फ़ौज नहावन्द के क़िले में इकट्ठी हो रही है, तो उन्होंने एक भी पल बरबाद किए बिना तीस हज़ार की फ़ौज तुरन्त रवाना कर दी। उसका सिपह-सालार नोमान-बिन-मक़रन को बना दिया। नहावन्द से नौ मील पहले अस्पदहान के मक़ाम पर फ़ौज ने पड़ाव डाला। ईरानियों ने एक हरकत यह की कि लड़ाई के मैदान में नोकीले गोखरू बिछा दिए जिसकी वजह से मुसलमान फ़ौज का आगे बढ़ना मुशकिल हो गया। मुसलमानों ने यह तरकीब की कि नहावन्द से छः मील की दूरी पर कुछ टीले थे उनके पीछे अपनी फ़ौज छिपा दी। और क़अक़ाअ-बिन-अम्र को सेना की एक टुकड़ी देकर नहावन्द के क़िले पर हमला करा दिया। जब लड़ाई होने लगी तो योजना नुसार क़अक़ाअ अपनी फ़ौज के साथ पीछे हटने लगे। यह देख़कर ईरानियों की हिम्मत और बढ़ी और मुट्ठी भर मुसलमानों को कुचल देने के लिए उनकी पूरी फ़ौज शहर से बाहर आ गई। क़अक़ाअ की फ़ौज अपना बचाव करती हुई पीछे हटती रही यहाँ तक़ कि उन टीलों के पास आ गई जहाँ मुसलमानों की फ़ौज छिपी हुई थी। मौक़ा देखकर नोमान ने अचानक ईरानियों पर हमला कर दिया। अचानक हमले से ईरानी बदहवास हो गए मुसलमानों ने उनको तलवारों पर रख लिया और गाजर मूली की तरह काटना शुरू कर दिया। मैदाने-जंग में इतना ख़ून बहा कि घोड़ों के पैर फिसलने लगे। नोमान-बिन-मक़रन का घोड़ा भी फिसलकर गिरा और वे ख़ुद ज़ख़्मों से चूर होकर अल्लाह को प्यारे हो गए। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

ईरानी मैदान छोड़कर भागे। मुसलमानों ने बहुत दूर तक उनका पीछा किया। नहावन्द पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हो गया। इस लड़ाई में तीस हज़ार ईरानी मारे गए।

ईरानी सल्तनत का ख़ातिमा

नहावन्द की हार से ईरानियों की कमर टूट गई। उनकी ताक़त हमेशा के लिए ख़त्म हो गई। उनका राजा यज़्दगर्द मुल्क छोड़कर भाग खड़ा हुआ। दर-दर की ठोकरें खाता हुआ दुनिया से चल बसा। नहावन्द की फ़तह को मुसलमानों ने 'फ़तहुलफ़ुतूह' का नाम दिया यानी सभी फ़तहों की फ़तह इस तरह पूरा ईरान इस्लामी राज्य में शामिल हो गया।

इस फ़तह की ख़बर जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* को पहुँची तो उन्होंने मस्जिदे-नबवी में तमाम मुसलमानों को जमा करके यह ख़ुशख़बरी सुनाई और ऐसी तक़रीर की जिसे सुनकर हाज़िरीन बहुत मुतास्सिर हुए। उन्होंने अपनी तक़रीर इन जुमलों पर ख़त्म की—

> "आज ईरानियों की सल्तनत बरबाद हो गई और अब वे इस्लाम को किसी तरह का नुक़सान नहीं पहुँचा सकते। लेकिन याद रखो! अगर तुम भी सीधे रास्ते पर क़ायम न रहे तो ख़ुदा तुम से भी हुकूमत छीनकर दूसरों को दे देगा।"

(ये वाक़िआ 21 हिजरी मुताबिक़ 642 ई. का है।)

दमिश्क़ फ़तह हो गया

इराक़ के साथ ही साथ शाम के इलाक़े में भी लड़ाइयाँ हो रही थीं। जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* ख़लीफ़ा हुए तो मुसलमान फ़ौजें दमिश्क़ के क़िले को अपने घेरे में लिए हुए थीं। दमिश्क़ की तरफ़ जानेवाले सभी रास्ते बन्द कर दिए गए थे। इतने दिनों के घेराव से शहरवाले परेशान हो गए थे। इसी बीच एक ऐसी घटना हुई जो मुसलमानों के लिए ग़ैबी मदद साबित हुई। हुआ यह कि दमिश्क़ का जो सबसे बड़ा पादरी था उसके यहाँ लड़का पैदा हुआ। इस ख़ुशी में पूरे शहर में जश्न मनाया गया और ख़ूब शराब पी गई। सभी फ़ौजी और शहरवाले थककर शाम होते ही सो गए। जब इसकी सूचना हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* को मिली तो उन्होंने कुछ बहादुर सिपाहियों को लेकर शहर पनाह[1] के पास पहुँच गए। ख़न्दक़ पानी से भरी हुई थी। हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* ने मश्क के ज़रीए ख़न्दक़ को पार किया और सीढ़ी लगाकर दीवार पर चढ़ गए। फ़ौजी आपके पीछे-पीछे थे। रस्सी की सीढ़ियों से शहर में उतर गए। शहर पनाह का दरवाज़ा खोल दिया गया बस फिर क्या था मुसलमानों की पूरी फ़ौज़ शहर में दाख़िल हो गई। शहर के निवासियों ने पनाह माँगी। हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* और हज़रत अबू-उबैदा *(रज़ि.)* ने उनको पनाह दे दी। उनके साथ बहुत अच्छा सुलूक किया गया। ईसाई मुसलमानों के इस बर्ताव से बहुत मुतास्सिर हुए। यह वाक़िआ सन् 14 हिजरी का है।

1. शहर की सुरक्षा के लिए उसके चारों ओर जो दीवार बनाई जाती है उसे शहर पनाह कहते हैं।

हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* की माज़ूली

हज़रत ख़ालिद-बिन-वलीद *(रज़ि.)* एक मशहूर सहाबी थे। उनकी हिम्मत और बहादुरी बहुत मशहूर थी। वे जंग के मैदान में इतनी बहादुरी से लड़ते थे कि दुशमन के छक्के छूट जाते थे और देखते ही देखते जंग का पाँसा पलट जाता था। सच तो यह है कि मुख़ालिफ़ लोग उनके सामने आने से कतराते थे। जिस जंग में वे शरीक होते थे उसमें मुसलमानों की फ़तह यक़ीनी समझी जाती थी। असूल में उनकी ये सारी कोशिशें दुनिया के किसी फ़ायदे या शोहरत के लिए न थीं बल्कि अल्लाह को राज़ी और ख़ुश रखने के लिए वे अपनी जान की बाज़ी लगा दिया करते थे। इसी लिए तो अल्लाह के रसूल *(रज़ि.)* ने उनको सैफ़ुल्लाह (अल्लाह की तलवार) का लक़ब दिया था।

हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* की ख़िलाफ़त के ज़माने में तो उन्होंने सिपह सालार की हैसियत से बहादुरी के ऐसे-ऐसे कारनामे अंजाम दिए थे कि जिनको सुनकर इनसानी अक़्ल दंग रह जाती है। इसी वजह से कुछ लोग इस तरह सोचने लगे थे कि मुसलमानों को जितनी फ़तहें हासिल हुई हैं वे सिर्फ़ हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* की वजह से हुई हैं। अगर वे न होते तो शायद इतनी कामयाबी हासिल न होती। हज़रत उमर *(रज़ि.)* को सोचने का यह अन्दाज़ बहुत खटकता था। आप उसे एक शैतानी फितना समझते थे। क्योंकि जैसा कि आप जानते हैं। फ़तह और शिकस्त अल्लाह के इख़्तियार में है। वह जिसे चाहता है इज़्ज़त देता है और जिसे चाहता है ज़िल्लत देता है। अलबत्ता कोशिश करना इनसान का फ़र्ज़ है। इसलिए ख़लीफ़ा होते ही हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने अपना ध्यान उस तरफ़ किया और

जब हालात क़ाबू में हो गए तो आपने हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* को सिपह-सालार के पद से अलग कर दिया। यह आदेश हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* को जंग के मैदान में मिला। उन्होंने बग़ैर कुछ कहे सुने ख़लीफ़ा के हुक्म के सामने सिर झुका दिया। हज़रत अबू-उबैदा *(रज़ि.)* को सिपह-सालार मुक़र्रर कर दिया गया और हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* एक सिपाही की तरह उनके अधीन ख़िदमत अंजाम देने लगे।

एक मौक़े पर हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* से सवाल किया गया कि "जब आप सिपह-सालार से मामूली सिपाही बना दिए गए तो आपने कैसा महसूस किया?" हज़रत ख़ालिद *(रज़ि.)* ने बड़े इत्मीनान से जवाब दिया, "जब मैं सिपह-सालार था तब भी अल्लाह के लिए लड़ता था और अब जबकि सिपाही हूँ, तो भी उसी को ख़ुश रखने के लिए जंग करता हूँ। मेरे नज़दीक दोनों में कोई फ़र्क़ नहीं है।"

सच है जो आदमी अल्लाह की रज़ा हासिल करने के लिए कोई काम करता है तो वह हर हाल में ख़ुश रहता है, चाहे उसे दुनिया की शान व शौकत हासिल हो या न हो।

बैतुल-मक़दिस की फ़तह

दमिश्क़ पर फ़तह हासिल करने के बाद मुसलमानों की फ़ौज उरदुन, हम्स, यरमूक, इनताकिया और नाबलस पर फ़तह हासिल करती हुई बैतुल-मक़दिस पहुँची और सन् 16 हिजरी में उसका घेराव कर लिया। वहाँ के ईसाइयों ने कुछ दिनों तक तो अपना बचाव किया फिर सुलह के लिए तैयार हो गए। अलबत्ता यह शर्त लगा दी कि अमीरुल-मोमिनीन ख़ुद तशरीफ़ लाकर अपने मुबारक हाथों से सुलहनामा लिखें।

इसकी ख़बर हज़रत उमर *(रज़ि.)* को कर दी गई। उन्होंने सहाबा *(रज़ि.)* से मशवरा करके हज़रत अली *(रज़ि.)* को अपना नायब मुक़र्रर कर दिया और ख़ुद मदीना से बैतुल-मक़दिस के लिए रवाना हो गए। उनका यह सफ़र एक मामूली सिपाही की तरह तय हुआ। जाबिया के मक़ाम पर सभी अफ़सरों ने आपका इस्तिक़बाल किया। आप पैवन्द लगा हुआ कुर्ता पहने हुए थे। आपके घोड़े के सुम घिस गए थे जिसकी वजह से वह लँगड़ा रहा था।

एक दूसरा अरबी नस्ल का घोड़ा और अच्छा लिबास पेश किया गया। आपने यह कहकर उसे क़बूल करने से इनकार कर दिया कि लिबास और सामान से इज़्ज़त हासिल नहीं होती। ख़ुदा ने हमको जो इज़्ज़त दी है वह इस्लाम की इज़्ज़त है और वही हमारे लिए काफ़ी है।

बैतुल-मक़दिस में दाख़िला

उसी सादगी की हालत में जब हज़रत उमर *(रज़ि॰)* बैतुल-मक़दिस में दाख़िल हुए तो वहाँ के आम लोग एक-दूसरे से पूछ रहे थे कि अमीरुल मोमिनीन कौन है। जब उनको बताया गया कि ये अमीरुल-मोमिनीन हैं तो वे हैरत में पड़ गए। क्योंकि उनमें और एक आम सिपाही में कोई फ़र्क़ नहीं दिखता था। हज़रत उमर *(रज़ि॰)* पहले मस्जिद में गए। मेहराबे-दाऊद के निकट पहुँचकर सजद-ए-दाऊद की आयत पढ़ी और सजदा किया। फिर ईसाइयों के गिरजा को अच्छी तरह देखा भाला, नमाज़ का समय हो गया तो ईसाईयों ने गिरजे में नमाज़ पढ़ने की इजाज़त दे दी, लेकिन हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने एहतियात के ख़याल से कि बाद में कोई फ़साद न उठ खड़ा हो, वहाँ नमाज़ अदा न की और गिरजा से बाहर आकर नमाज़ पढ़ी।

हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने वहाँ कई दिन क़ियाम किया। एक दिन हज़रत बिलाल *(रज़ि॰)* को बुलाकर अज़ान देने की दरख़ास्त की। हज़रत बिलाल *(रज़ि॰)* ने कहा, "मैं इरादा कर चुका था कि अल्लाह के रसूल *(सल्ल॰)* के बाद किसी के कहने पर अज़ान न दूँगा लेकिन आज आपका हुक्म बजा लाऊँगा।" अज़ान शुरू हुई तो तमाम सहाबा *(रज़ि॰)* ज़ारो-क़तार रोने लगे। उनकी नज़रों के सामने प्यारे नबी *(सल्ल॰)* का ज़माना फिर गया। खुद हज़रत उमर *(रज़ि॰)* की भी हिचकी बँध गई।

मिस्र की फ़ुतूहात

हज़रत अम्र-बिन-आस *(रज़ि.)* ने बहुत कह सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* से मिस्र पर फ़तह हासिल करने की इजाज़त ले ली और चार हज़ार फ़ौज के साथ कूच कर गए। कई शहरों पर फ़तह हासिल करते हुए जब उन्होंने फ़िसतात के क़िले का घेराव किया तो फ़ौज कम रह गई थी। हज़रत अम्र *(रज़ि.)* ने मदद के लिए और ज़्यादा फ़ौज भेजने की गुज़ारिश हज़रत उमर *(रज़ि.)* को लिखकर भेजी। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने दस हज़ार फ़ौज चार अफ़सरों की मातहती में भेज दी। जिनमें से एक हज़रत ज़ुबैर-बिन-अव्वाम *(रज़ि.)* थे।

सात महीने की लगातार कोशिश और हज़रत ज़ुबैर की ग़ैर मामूली बहादुरी से फ़िसतात के क़िले पर फ़तह हासिल कर ली गई। वहाँ से फ़ौजें स्कन्दरिया की तरफ़ रवाना हुईं और कुछ दिनों के घेराव के बाद उसपर भी फ़तह हासिल कर ली गई। फ़तह की ख़ुशख़बरी सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* सजदे में गिर पड़े और ख़ुदा का शुक्र अदा किया।

स्कन्दरिया की फ़तह के बाद पूरे मिस्र में इस्लाम का डंका बजने लगा। यह फ़तह 20 हिजरी और 21 हिजरी के बीच हुई।

ग़ैरते-ईमानी

हज़रत हातिब-बिन-अबी-बलता *(रज़ि.)* मशहूर सहाबी थे। वे ख़ुद हिजरत करके मदीना चले आए थे लेकिन उनके बाल-बच्चे मक्का ही में थे। जब प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने मक्का फ़तह करने का इरादा किया तो हज़रत हातिब *(रज़ि.)* ने अपने परिवार की सुरक्षा के ख़याल से अपने कुछ मुशरिक दोस्तों को इसकी सूचना दे दी। हज़रत उमर *(रज़ि.)* को मालूम हुआ तो वे इस्लाम से गहरा ताल्लुक़ होने की वजह से मारे ग़ुस्से के आपे से बाहर हो गए और प्यारे नबी *(सल्ल.)* से कहा कि, "इजाज़त दीजिए कि मैं इब्ने-अबी-बलता *(रज़ि.)* को क़त्ल कर दूँ।" मगर नबी *(सल्ल.)* ने मना कर दिया।

क़ातिलाना हमला

नहावन्द की लड़ाई में फ़ीरोज़ नाम का एक ईरानी गिरिफ़्तार हुआ था। उसे हज़रत मुग़ीरा-बिना-शाबा *(रज़ि.)* ने लेकर ग़ुलाम बना लिया था। उसकी कुन्यत अबू-लूलू थी। एक दिन वह हज़रत उमर *(रज़ि.)* के पास आया और शिकायत की कि उसके मालिक ने उसपर बहुत भारी लगान ठहरा दिया है। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने पूछा कितना? उसने बताया कि रोज़ाना दो दिरहम।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने फिर सवाल किया, "तुम्हारा पेशा क्या है?" फ़ीरोज़ बोला, "बढ़ईगिरी, लोहारी, और तस्वीर बनाने का काम करता हूँ।" हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने जवाब दिया "इन कामों के मुक़ाबले में यह लगान ज़्यादा नहीं है।"

फ़ीरोज़ मन ही मन में बहुत ग़ुस्सा हुआ और बड़बड़ाता हुआ चला गया। इस घटना के बाद वह हज़रत उमर *(रज़ि.)* का जानी दुश्मन बन गया और मौक़े की तलाश में रहने लगा। आख़िरकार एक दिन जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* फ़ज्र की नमाज़ पढ़ाने के लिए आगे बढ़े तो फ़ीरोज़ ने मौक़ा पाकर ख़ंजर से उन पर छः वार कर दिए। वे वहीं गिर पड़े। नमाज़ हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ *(रज़ि.)* ने पढ़ाई। लोगों ने फ़ीरोज़ को पकड़ना चाहा तो उसने कई लोगों को ज़ख़्मी कर दिया और आख़िर में ख़ुद अपने आप को भी उसी ख़ंजर से हलाक कर लिया।

यह घटना 26 ज़िलहिज्जा 23 हिजरी (मुताबिक़ 644 ई॰) की है।

आख़िरी ख़ाहिश

जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* को उठाकर घर लाया गया तो उन्होंने, सबसे पहले पूछा कि मेरा क़ातिल कौन है? बताया गया "फ़ीरोज़" यह सुनकर आपके चेहरे पर इत्मीनान के आसार ज़ाहिर हुए और कहा, "अलहम्दुलिल्लाह! मेरा क़ातिल कोई मुसलमान नहीं है।"

ज़ख़्म बहुत गहरा था। आपको यक़ीन हो गया था कि बचना मुमकिन नहीं है। आपने अपने बेटे हज़रत अब्दुल्लाह *(रज़ि.)* को बुलाकर कहा कि "आइशा *(रज़ि.)* के पास जाओ और कहो कि उमर आप से अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* की बग़ल में दफ़न होने की इजाज़त चाहता है।"

हज़रत अब्दुल्लाह गए, देखा कि हज़रत आइशा *(रज़ि.)* बैठी रो रही थीं। उन्होंने हज़रत उमर *(रज़ि.)* का सलाम और पैग़ाम पहुँचा दिया। उन्होंने रोते हुए कहा, "उस जगह को तो मैंने अपने लिए रख छोड़ा था लेकिन जब उमर *(रज़ि.)* की ये इच्छा है तो मैं उनको अपने ऊपर तरजीह दूँगी।"

जब यह ख़बर हज़रत उमर *(रज़ि.)* को पहुँचाई गई तो आपकी ज़बान से बेसाख़्ता निकला, "यही तो मेरी सबसे बड़ी आरज़ू थी, अलहम्दुलिल्लाह! आज पूरी हो गई।"

हज़रत उमर *(रज़ि॰)* की वसीयत

उस वक़्त इस्लाम के हक़ में सबसे ज़रूरी काम ख़लीफ़ा का चुनाव था। तमाम सहाबा *(रज़ि॰)* ने बार-बार कहा कि इस काम को भी आप पूरा करते जाएँ। आख़िरकार उन्होंने कहा, "मैंने बहुत सोचा लेकिन अफ़सोस इस बोझ को उठानेवाला मुझे कोई न दिखा। बहरहाल इन छः व्यक्तियों में से जिनके बारे में ज़्यादा राय आएँ उसे ख़लीफ़ा चुन लिया जाए। अली, उस्मान, ज़ुबैर, तलहा, साद-बिन-अबी-वक़्क़ास और अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़ *(रज़ि॰)*। फिर उन्होंने कहा, "जो व्यक्ति ख़लीफ़ा चुना जाए उसको मैं वसीयत करता हूँ कि इन पाँचों फ़रीक़ों के हुक़ूक़ की अदाएगी का पूरा-पूरा ख़याल रखे। मुहाजिरीन, अनसार, आराब, वे अरबवाले जो दूसरे शहरों में जाकर बस गए हैं और ज़िम्मी[1]। उसके बाद आपने अपने बेटे हज़रत अब्दुल्लाह *(रज़ि॰)* को बुलाकर पूछा कि "मुझपर क़र्ज़ कितना है?" बताया गया कि "छियासी हज़ार दिरहम" उन्होंने कहा कि, "मेरा मकान बेचकर इस क़र्ज़ को अदा कर दिया जाए।" लोगों ने कहा कि सारा क़र्ज़ आपने मुसलमानों के लिए लिया था, उसे बैतुलमाल से अदा कर दिया जाएगा। लेकिन आपने उसे पसन्द नहीं फ़रमाया और अपने बेटे को उसे अदा करने की ताकीद फ़रमा दी।

1. जो लोग मुसलमान न हुए हों और अपने मज़हब पर क़ायम रहते हुए इस्लामी हुकूमत में रहना पसन्द करें, वे 'ज़िम्मी' कहलाते हैं।

हज़रत उमर *(रज़ि॰)* चल बसे

तीन दिन बीमार रहने के बाद आप पहली मुहर्रम 24 हिजरी (मुताबिक़ 644 ई॰) शनिवार को इस दुनिया से चल बसे। इन्नालिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

हज़रत उमर *(रज़ि॰)* के जनाज़े की नमाज़ हज़रत सुहैब *(रज़ि॰)* ने पढ़ाई और आपको प्यारे नबी *(सल्ल॰)* की बग़ल में दफ़न कर दिया गया।

आपकी आयु लगभग तिरसठ वर्ष की थी। आपको दफ़न करने से पहले ही हज़रत अब्दुल्लाह ने आपका मकान बेचकर उस रक़्म से आपका पूरा क़र्ज़ अदा कर दिया। यह मकान हज़रत मुआविया *(रज़ि॰)* ने ख़रीदा था।

अरबवालों का कोई घर ऐसा न था जिसमें हज़रत उमर *(रज़ि॰)* का सोग न मनाया गया हो। हज़रत इमाम हसन *(रज़ि॰)* ने कहा, "जिस घर में हज़रत उमर *(रज़ि॰)* की कमी न महसूस की गई वह बहुत बुरा घराना है।"

उन्होंने कुल 11 साल 6 महीना और 4 दिन ख़िलाफ़त का काम अंजाम दिया।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* कैसे थे

हज़रत उमर *(रज़ि.)* का शरीर गठा हुआ, गालों पर गोश्त कम, चेहरा भारी और सिर बड़ा था। रंगत गेहुंवाँ थी। सामने के बाल उड़े हुए थे। दाढ़ी घनी और मूँछें बड़ी-बड़ी थीं। क़द इतना लम्बा था कि सैकड़ों के मजमे में दूर से पहचान लिए जाते थे। वे बहुत बहादुर और हिम्मतवाले थे। मिज़ाज में सख़्ती थी। लेकिन ख़लीफ़ा बनने के बाद बहुत नर्म दिल हो गए थे। हाँ, दीन के मामले में बहुत सख़्त थे। इसी लिए तो प्यारे नबी *(सल्ल.)* फ़रमाया करते थे "शैतान उमर के साये से भी भागता है।" आप का लिबास बहुत सादा होता था, कपड़ों में कई-कई पैवन्द लगे होते थे। अकसर अमामा (पगड़ी) बाँधते थे। जूती अरबी ढंग की होती थी जिसमें तसमा लगा होता था।

आप खाना बहुत सादा इस्तेमाल करते थे। रोटी पर ज़ैतून का तेल लगाकर खा लेते थे। कभी-कभी दस्तरख़ान पर गोश्त, दूध, तरकारी और सिरका भी होता था। मिज़ाज में बहुत सादगी और बेतकल्लुफ़ी थी। प्यारे नबी *(सल्ल.)* से बहुत मुहब्बत करते थे। अल्लाह के ग़ज़ब से बहुत डरते थे। अकसर अकेले में रोया करते थे और गुनाहों से तौबा किया करते थे। हर एक के साथ बराबरी का बर्ताव करते थे। वे बहुत ही इनसाफ़ पसन्द थे। आप की रातें इबादत में और दिन लोगों की सेवा में गुज़रते थे। ग़रज़ यह कि आप बहुत नेक और अच्छे थे। अल्लाह आपसे राज़ी हो। आपकी कई बीवियाँ थीं। सभी बड़ी नेक और अच्छी थीं। उनमें से एक हज़रत अली *(रज़ि.)* की बेटी थीं। इसी प्रकार आपके 10 बेटे और 4 बेटियाँ थीं। इन्होंने आगे चलकर दीन की बड़ी ख़िदमत की।

अल्लाह की नाराज़ी का डर

हज़रत उमर *(रज़ि.)* अल्लाह के अज़ाब और क़ियामत में हिसाब-किताब से बहुत डरते थे। देखिए ना! आपने रास्ता चलते एक तिनका उठाया और कहने लगे, "काश! मैं इस तिनके जैसा होता (जिसके लिए आख़िरत के हिसाब-किताब का सवाल ही नहीं।) या मैं पैदा ही न होता तो अच्छा था।" फिर कहने लगे कि, "अगर आसमान से यह आवाज़ आए कि एक आदमी के सिवा दुनिया के सभी लोग जन्नती हैं तब भी मुझे यही डर लगा रहेगा कि वह बदनसीब दोज़ख़ी मैं ही तो नहीं हूँ।"

अल्लाह तआला को ख़ुश करने के लिए वे दिन रात ऐसे कामों में लगे रहते थे जिनसे वह राज़ी होता है। इसके बावजूद वे अकसर कहा करते थे कि, "यही बहुत ग़नीमत है कि हिसाब के दिन मेरी नेकी और बदी बराबर-बराबर हो जाएँ।"

देखा आपने, कितना डरते थे हज़रत उमर *(रज़ि.)* आख़िरत के अज़ाब और अल्लाह की नाराज़ी से! अल्लाह तआला हमें भी इससे बचाए। आमीन!

प्यारे नबी *(सल्ल०)* से मुहब्बत

प्यारे नबी *(सल्ल०)* से मुहब्बत ईमान का एक हिस्सा है। जो दिल प्यारे नबी *(सल्ल०)* की मुहब्बत से ख़ाली हो वह मुसलमान का दिल नहीं हो सकता।

एक बार हज़रत उमर *(रज़ि०)* प्यारे नबी *(सल्ल०)* की ख़िदमत में हाज़िर हुए और कहा कि, "अपनी जान के सिवा आप *(सल्ल०)* मुझे सारी दुनिया से ज़्यादा प्यारे हैं।" प्यारे नबी *(सल्ल०)* ने फ़रमाया, "ऐ उमर! मेरी मुहब्बत अपनी जान से भी ज़्यादा होनी चाहिए।" एक लम्हे तक हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने अपने पर ग़ौर किया और कहने लगे, "अब आप मुझे अपनी जान से भी ज़्यादा प्यारे हैं।" उन्होंने ये बात सिर्फ़ ज़बान ही से नहीं कही बल्कि उसपर चलकर भी दिखा दिया।

प्यारे नबी *(सल्ल०)* जिनको अपनी ज़िन्दगी में अज़ीज़ रखते थे, हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में उनका ख़ास ख़याल रखा। इसलिए जब उन्होंने सहाबा *(सल्ल०)* के वज़ीफ़े मुक़र्रर किए तो प्यारे नबी *(सल्ल०)* के महबूब ग़ुलाम (दास) हज़रत ज़ैद-बिन-हारिसा के लड़के हज़रत उसामा-बिन-ज़ैद की तनख़ाह अपने लड़के हज़रत अब्दुल्लाह *(रज़ि०)* से ज़्यादा मुक़र्रर की। जब हज़रत अब्दुल्लाह *(रज़ि०)* ने शिकायत के तौर पर एतिराज़ किया तब उन्होंने कहा, "ऐ बेटे! अल्लाह के रसूल *(सल्ल०)* उसामा *(रज़ि०)* को तुझसे ज़्यादा चाहते थे। (इसी लिए मैं भी उनको तेरे मुक़ाबले में ज़्यादा अज़ीज़ रखता हूँ।)" यह रहा प्यारे नबी *(सल्ल०)* से मुहब्बत का सुबूत।

नबी *(सल्ल०)* की पैरवी

प्यारे नबी *(सल्ल०)* की पैरवी ईमान की शर्त है। हम उस वक़्त तक पक्के और सच्चे मोमिन नहीं बन सकते जब तक कि हर बात में नबी *(सल्ल०)* के अमल की नक़्ल न करें। हज़रत उमर *(रज़ि०)* इस मामले में बहुत आगे बढ़े हुए थे और नबी *(सल्ल०)* की ऐसी-ऐसी बातों की पैरवी करते थे जिनके बारे में हम सोच भी नहीं सकते।

एक बार रसूल *(सल्ल०)* ने ज़ुलहलीफ़ा के मक़ाम पर दो रकअत नमाज़ पढ़ी थी। हज़रत उमर *(रज़ि०)* जब भी उस तरफ़ से गुज़रते तो उस जगह दो रकअत नमाज़ अदा कर लेते थे। एक आदमी ने पूछा, "यह नमाज़ कैसी है?" उनका जवाब था कि, "मैंने अल्लाह के रसूल *(सल्ल०)* को यहाँ नमाज़ पढ़ते देखा था इसलिए मैं भी पढ़ता हूँ।"

एक बार वे हज्रे-असवद के निकट गए। पहले उसे चूमा फिर कहने लगे, "ऐ असवद! मैं जानता हूँ कि तू एक पत्थर है, न नुक़सान पहुँचा सकता है, न फ़ायदा। अगर मैंने अल्लाह के रसूल *(सल्ल०)* को तुझे चूमते न देखा होता तो मैं हरगिज़ तुझे न चूमता।"

देखा आपने, हज़रत उमर *(रज़ि०)* ने प्यारे नबी *(सल्ल०)* को जो काम जिस तरह करते देखा था, बिलकुल उसी प्रकार करने की कोशिश करते थे। कितने अच्छे थे हज़रत उमर *(रज़ि०)*!

एहतियात

सरकारी यां बैतुलमाल की चीज़ों को बिना इजाज़त इस्तेमाल में लाना हज़रत उमर *(रज़ि.)* सही नहीं समझते थे। अगर आपको ऐसी बातों का पता चलता था तो उसे मना कर दिया करते थे।

एक बार वे बाज़ार से गुज़र रहे थे। देखा कि एक बहुत मोटा ताज़ा ऊँट बिक रहा था। पूछने पर पता चला कि यह ऊँट उनके लड़के अब्दुल्लाह का है। उन्होंने उससे पूछा कि, "यह ऊँट कहाँ था?"

उन्होंने बताया कि, "मैंने ख़रीदकर सरकारी चरागाह में छोड़ दिया था। जब ख़ूब मोटा-ताज़ा हो गया तो अब बेचना चाहता हूँ।"

यह सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने कहा, "चूँकि यह ऊँट सरकारी चरागाह में चरकर मोटा हुआ है, इसलिए तुम इसकी केवल असली क़ीमत के हक़दार हो। बाक़ी क़ीमत बैतुलमाल में जमा कर देना।"

देखा आपने, हज़रत उमर *(रज़ि.)* कितनी एहतियात बरतते थे।

सादगी और ख़ाकसारी

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के रोब व दबदबे का एक तरफ़ तो यह हाल था कि ईरान और रोम के राजा उनके नाम से भी काँप उठते थे और दूसरी तरफ़ उनके मिज़ाज में इतनी सादगी और ख़ाकसारी थी कि बदन पर 12 पैवन्द का कुर्ता, सिर पर फटा हुआ अमामा, पाँव में टूटी हुई जूतियाँ पहने, काँधे पर पानी की मशक लिए बेवा औरतों के घर पानी पहुँचाते नज़र आते थे।

जो लोग इस्लामी फ़ौज के साथ लड़ाई पर गए होते हज़रत उमर *(रज़ि.)* उनके घरों पर जाते, ख़ैरियत मालूम करते, बाज़ार से सौदा लाकर देते। फिर जब काम करते-करते थक जाते तो मस्जिदे-नबवी के एक कोने में मिट्टी के फ़र्श पर आराम कर लेते।

कितनी सादगी और ख़ाकसारी थी अमीरुल-मोमिनीन *(रज़ि.)* के मिज़ाज में! अल्लाह उनके दर्जे बुलन्द फ़रमाए।

क़नाअत पसन्दी

हज़रत उमर *(रज़ि.)* लालच से सख़्त नफ़रत करते थे, और क़नाअत को बहुत पसन्द करते थे। जितनी चीज़ मिल जाती उसी पर बस करते। एक बार अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* को कुछ देना चाहा। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने कहा, "मुझसे ज़्यादा ज़रूरत मन्द लोग मौजूद हैं। वे उसके ज़्यादा हक़दार हैं।" प्यारे नबी *(सल्ल.)* ने फ़रमाया, "इसको ले लो, फिर तुम्हें इख़्तियार है कि उसे अपने पास रखो या किसी को दे दो। इनसान को बिना माँगे कोई चीज़ मिले तो ले लेना चाहिए।"

जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* ख़लीफ़ा हो गए और तिजारत छोड़नी पड़ी तो बैतुलमाल से अपना वज़ीफ़ा सबसे कम ठहराया। जिसकी वजह से बहुत खींचतान कर ज़रूरतें पूरी होती थीं। उन्होंने कहा, "बैतुलमाल से मुझे सिर्फ़ इतना ही मिलना चाहिए जो मेरे और मेरे बाल-बच्चों के खाने के लिए काफ़ी हो।" इसलिए आप दो दिरहम रोज़ाना के हिसाब से लेते थे। साल भर में दो जोड़े कपड़े लेते थे। एक गर्मियों में और एक जाड़े में। हज या उमरा के लिए जाते तो सवारी लेते थे।

इसी तरह आपने अपनी सारी ज़िन्दगी गुज़ार दी। अल्लाह आप *(रज़ि.)* से राज़ी हो।

बराबरी का ख़याल

हज़रत उमर *(रज़ि.)* कहा करते थे, "अगर मैं ऐशो-इशरत की ज़िन्दगी बसर करूँ और जनता मुसीबत और ग़रीबी में दिन गुज़ारे तो मुझ सा बुरा कोई न होगा।" यह सिर्फ़ आप कहते ही न थे बल्कि उसपर अमल भी करते थे।

सन 18 हि॰ में जब क़हत पड़ा तो उस वक़्त आपकी बेक़रारी देखी न जाती थी। आपने दूसरे देशों से ग़ल्ला मँगा-मँगाकर बँटवाया। क़हत के दिनों में आपने अपनी पसन्द की सभी चीज़ें खाना छोड़ दी थीं। और फ़रमाते थे, "अल्लाह के बन्दे तो भूख से मरें और मैं मज़े करूँ।" दिन रात दौड़ धूप करते रहते थे यहाँ तक कि आपका रंग काला पड़ गया था और आप बहुत कमज़ोर हो गए थे।

इसी तरह एक बार सीरिया के सफ़र में आपके सामने बहुत अच्छे-अच्छे खाने पेश किए गए। यह देखकर आपने पूछा, "क्या सबके लिए ऐसे ही खाने का इन्तिज़ाम है?" लोगों ने जवाब दिया, "हर आदमी के लिए ऐसा इन्तिज़ाम किस तरह सम्भव है?" आप *(रज़ि.)* ने फ़रमाया, "तो फिर मुझे भी इसकी ज़रूरत नहीं।" यह कहकर आपने वह खाना वापस कर दिया।

ज़िम्मेदारी का एहसास

ख़लीफ़ा होने के बाद हज़रत उमर *(रज़ि.)* जनता को आराम पहुँचाने की बड़ी फ़िक्र रखते थे। उनके हालात मालूम करने के लिए वे रातों को गश्त (घूमा) करते थे।

एक बार गश्त करते हुए मदीना से तीन मील आगे निकल गए। हरार नामी आबादी में पहुँचे तो एक मकान से बच्चों के रोने की आवाज़ आ रही थी। हज़रत उमर *(रज़ि.)* वहीं रुक गए। देखा कि एक औरत कुछ पका रही है और तीन बच्चे बिलक-बिलककर रो रहे हैं। आप *(रज़ि.)* ने उस औरत से बच्चों के रोने की वजह पूछी। वह बोली, "बच्चे भूख से बेताब हैं, मेरे पास खिलाने को कुछ है नहीं। उनको बहलाने के लिए ख़ाली हाँडी चूल्हे पर चढ़ा दी है।" यह सुनते ही हज़रत उमर *(रज़ि.)* की आँखों में आँसू आ गए। वे तुरन्त मदीना वापस आए। आटा, घी और खजूरों की बोरी पीठ पर लादी और चल दिए। आपके ग़ुलाम असलम ने कहा, "अमीरुल-मोमिनीन! मुझे दीजिए मैं लिए चलता हूँ।" उन्होंने कहा, "क्या क़ियामत के रोज़ तुम मेरा बोझ उठा सकोगे?" यह कहकर सारा सामान लादे हुए उस औरत के पास पहुँचे और अपने सामने पकवाकर बच्चों को खिलाया। जब बच्चे खाकर सो गए तो आप *(रज़ि.)* वापस आ गए। दूसरे दिन आप *(रज़ि.)* ने उस औरत और बच्चों का वज़ीफ़ा मुक़र्रर कर दिया।

देखा आपने! हज़रत उमर *(रज़ि.)* को दूसरों की कितनी फ़िक्र थी।

ख़िदमत का शौक़

एक बार हज़रत उमर *(रज़ि.)* रात में गश्त कर रहे थे कि दूर ख़ेमे से किसी के कराहने की आवाज़ आई। आप उस ख़ेमे के पास गए। देखा कि एक बद्दू बाहर बैठा हुआ है और अन्दर से किसी के रोने की आवाज़ आ रही है। आपने बद्दू से हाल मालूम किया। उसने जवाब दिया, "मेरी बीवी के बच्चा होनेवाला है, वह दर्द से पीड़ित है। मैं परदेसी हूँ। कोई जान पहचान का नहीं है जो मदद कर सके।"

आप फ़ौरन घर आए। बीवी से सारी घटना बताकर पूछा, "क्या मेरे साथ चलकर इस सुनहरे मौक़े से फ़ायदा उठाओगी?" बीवी उम्मे-कुलसूम *(रज़ि.)* उसी वक़्त तैयार हो गईं। जब बद्दू के ख़ेमे के पास पहुँचे तो उम्मे-कुलसूम ख़ेमे के अन्दर चली गईं। हज़रत उमर *(रज़ि.)* बद्दू के पास बैठ गए। थोड़ी देर के बाद अन्दर से आवाज़ आई, "अमीरुल-मोमिनीन! आप अपने दोस्त को लड़के की ख़ुशख़बरी सुना दीजिए।" बद्दू अमीरुल-मोमिनीन का लफ़्ज़ सुनकर चौंक पड़ा और बहुत सटपटया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उसे तसल्ली दी और कहा, "ख़लीफ़ा तो क़ौम का ख़ादिम होता है।"

सच है! ख़लीफ़ा का फ़र्ज़ है कि वह अपनी जनता के हालात से वाक़िफ़ रहे और उनकी परेशानियों को दूर करे।

ईमानदार की क़द्र

एक रात हज़रत उमर *(रज़ि.)* अपने ग़ुलाम असलम के साथ गश्त करते हुए एक घर के क़रीब पहुँचे। अन्दर से एक बुढ़िया की आवाज़ आई, "बेटी! दूध में पानी मिला दे।" लड़की ने जवाब दिया, "अम्मी क्या आपने सुना नहीं, अमीरुल-मोमिनीन की तरफ़ से ऐलान हुआ है कि कोई दूध में पानी मिलाकर न बेचे।"

माँ ने कहा। "बेटी! इस वक़्त न यहाँ अमीरुल-मोमिनीन हैं और न ऐलान करनेवाला।" लड़की बोली, "वाह अम्मी वाह! अमीरुल-मोमिनीन न सही अल्लाह तो देख रहा है। यह हमारे लिए मुनासिब नहीं कि सामने तो फ़रमाँबरदारी करें और पीठ पीछे नाफ़रमानी। नहीं अम्मी! यह मुझसे न होगा।"

लड़की का यह जवाब सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* बहुत खुश हुए और असलम से कहा कि, "मकान पर कोई निशान बना दो।"

दूसरे दिन आपने एक आदमी को भेजकर माँ-बेटी दोनों को बुलाया और अपने बेटे हज़रत आसिम के साथ उस लड़की का पैग़ाम दिया। आप *(रज़ि.)* ने फ़रमाया, "इस निकाह में बरकत होगी।" हज़रत उमर-बिन-अब्दुल-अज़ीज़ *(रह.)* इसी लड़की के नवासे (नाती) थे।

रहमदिली

हज़रत उमर *(रज़ि.)* एक बार रात में गश्त कर रहे थे कि एक घर से बच्चे के बिलक-बिलक कर रोने की आवाज़ आई। वे रुक गए और माँ से कहा, "अल्लाह से डर और बच्चे को न रुला।" दूसरी बार फिर आवाज़ आई। उन्होंने उसकी माँ को फिर समझाया। जब तीसरी बार आवाज़ आई तो उन्हें ग़ुस्सा आ गया और उसकी माँ से कहा, "ख़ुदा तुझे समझे! आख़िर तू कितनी बे रहम माँ है। बच्चे को चुप क्यों नहीं करती?" माँ ने जवाब दिया, "वह भूखा है, मैं उसे दूध पिलाना नहीं चाहती"। आपने पूछा "क्यों?" माँ बोली, "उमर *(रज़ि.)* का हुक्म है कि दूध पीते बच्चे को वज़ीफ़ा न दिया जाए। मैं इसका दूध छुड़ाना चाहती हूँ।" हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने पूछा, "इसकी क्या उम्र है?" वह बोली "इतने महीने" उन्होंने कहा, "ख़ुदा तुझे समझे! दूध छुड़ाने में जल्दी न कर।"

दूसरे रोज़ फ़ज्र की नमाज़ के बाद उन्होंने लोगों को जमा करके यह घटना सुनाई और कहा, "अफ़सोस है उमर *(रज़ि.)* पर! न जाने कितने मुसलमान बच्चों का ख़ून उसकी गरदन पर है। आज से हर मुसलमान बच्चे का वज़ीफ़ा उसके पैदा होते ही मुक़र्रर किया जाता है। अब माएँ अपने बच्चों का दूध छुड़ाने में जल्दी न करें।"

कितने रहमदिल थे हज़रत उमर *(रज़ि.)* !

क़ियामत का डर

एक रोज़ हज़रत उमर *(रज़ि.)* गश्त के लिए निकले। रास्ते में एक बुढ़िया मिली। उन्होंने उससे पूछा, "बड़ी बी! तुम्हारा अमीरुल-मोमिनीन कैसा आदमी है?" "बेटे बहुत बुरा आदमी है।" बुढ़िया ने कहना शुरू किया, "जब से ख़लीफ़ा हुआ है मुझे एक पैसा भी नहीं मिला।" "उमर को तुम्हारा हाल क्या मालूम, तुमने ख़बर की होती।" हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने जवाब दिया। "बस वह अमीरुल-मोमिनीन बनना जानता है।" बुढ़िया ने ग़ुस्से में कहा, "उसे तो पूरब से लेकर पश्चिम तक हर जगह की ख़बर रखनी चाहिए।" बुढ़िया की यह बात सुनकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* रोने लगे और कहा, "मुझे उमर पर तरस आता है। अच्छा, तुम्हारे ऊपर उसने जो ज़ुल्म किया है तुम उसका क्या बदला लोगी?" "बेटे मेरा मज़ाक़ न कर।" बुढ़िया बोली। ये बातें हो ही रही थीं कि सामने से हज़रत अली *(रज़ि.)* और इब्ने-मसऊद *(रज़ि.)* आ गए और कहा, "अस्सलामु अलैकुम या अमीरुल मूमिनीन।"

यह सुनकर बुढ़िया घबरा गई कि अमीरुल मोमिनीन को उनके मुँह पर बुरा भला कहा। हज़रत उमर *(रज़ि.)* बोले, "इसमें कुछ हर्ज नहीं।" और चमड़े के टुकड़े पर यह तहरीर लिखवाई कि उमर ने अपना ज़ुल्म उस बुढ़िया से पच्चीस अशरफ़ी के बदले माफ़ करा लिया है। अब यह क़ियामत के दिन अल्लाह के सामने दावा नहीं कर सकती और इसपर हज़रत अली *(रज़ि.)* और इब्ने-मसऊद *(रज़ि.)* की गवाही करा ली।

वादे का ख़याल रखते

शोस्तर की पराजय के बाद ईरानियों के हाकिम हरमिज़ान को बन्दी बनाकर मदीना भेज दिया गया। यह बहुत ही मक्कार और धोखेबाज़ आदमी था। उसकी ज़ात से इस्लामी फ़ौज को बेहद नुक़सान पहुँच चुका था। इसलिए हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उसके क़त्ल का फ़ैसला कर लिया था जब उसे क़त्ल करने के लिए ले चले तो उसने पीने के लिए पानी माँगा। एक प्याले में पानी में दे दिया गया। वह हाथ में प्याला लेकर कुछ सोचने लगा। पूछा गया कि "पानी क्यों नहीं पीते?" उसने जवाब दिया, "मुझे डर है कि मैं पानी पीने लगूँ और तुम मेरा सिर उड़ा दो।"

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने वादा कर लिया कि, "जब तक तुम यह पानी नहीं पी लोगे, तुमको क़त्ल नहीं किया जाएगा।" यह सुनते ही हरमिज़ान ने पानी ज़मीन पर फ़ेंक दिया और कहने लगा, "अब तुम मुझे हरगिज़ क़त्ल नहीं कर सकते जब तक मैं यह पानी न पी लूँ। और यह पानी मुझे अब मिल नहीं सकता।" हज़रत उमर *(रज़ि.)* हरमिज़ान की इस चालाकी पर दंग रह गए। मगर वादे का ख़याल रखते हुए उसे छोड़ दिया।

हरमिज़ान हज़रत उमर *(रज़ि.)* के इस रवैये से बहुत मुतास्सिर हुआ और उसी वक़्त मुसलमान हो गया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने दो हज़ार दिरहम सालाना उसका वज़ीफ़ा ठहरा दिया। उसने अपनी बाक़ी उमर मदीना में गुज़ार दी।

सच्चाई रंग लाकर रहती है।

इनसाफ़

ईरान के एक शहर जुनदैसापूर पर जब मुसलमानों ने हमला किया तो शहरवाले क़िला बन्द हो गए। मुसलमानों ने भी क़िले को घेर लिया। आपस में झड़पें शुरू हो गईं। कुछ दिनों के बाद देखते क्या हैं कि शहर के दरवाज़े खुल गए और शहरवाले इत्मीनान के साथ इधर-उधर आने जाने लगे। यह देखकर मुसलमानों को बड़ी हैरत हुई। मालूम करने पर शहरवालों ने जवाब दिया कि "जब आपने हमें अमान दे ही दी है तब भी हम न घूमें फिरें।"

यह जवाब सुनकर तो और ज़्यादा हैरत हुई कि किसने अमान दे दी। आख़िरकार पता चला कि एक ग़ुलाम ने ख़ामोशी के साथ जिज़्ये की शर्त पर उनको अमाननामा लिख दिया था। इसपर आपस में विवाद पैदा हो गया। कुछ लोग कहने लगे, "चूँकि ये मुआहिदा बिना बताए छिपकर किया गया है इसलिए इसकी पाबन्दी हमारे लिए ज़रूरी नहीं है।"

फ़ौजी-सरदार ने इस मामले को हज़रत उमर *(रज़ि.)* के पास फ़ैसले के लिए भेज दिया। उन्होंने ग़ुलाम की दी हुई अमान को तस्लीम कर लिया और कहला भेजा कि "एक आदमी का वादा पूरी मिल्लत की ओर से मुआहिदा हो गया।"

देखिए, इसे कहते हैं इनसाफ!

बैतुलमाल अमानत है

हज़रत उमर *(रज़ि.)* बैतुलमाल की एक-एक चीज़ को अमानत समझते थे और अपने आपको उसका अमीन!

एक बार अहनफ़-बिन-क़ैस कुछ सरदारों को साथ लेकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* से मुलाक़ात करने के लिए आए। देखते क्या हैं कि वे बेहद परेशान और दामन चढ़ाए हुए इधर-उधर दौड़ते फिर रहे हैं। अहनफ़ को देखकर फ़रमाया, "आओ! तुम भी मेरा साथ दो। बैतुलमाल का एक ऊँट खो गया है. उसे तलाश करा दो।"

"यह काम तो एक ग़ुलाम भी कर सकता है, आप क्यों परेशान हो रहे हैं।" अहनफ़ ने जवाब दिया। "अहनफ़! कल क़ियामत के दिन इसके बारे में सवाल तो मुझसे होगा, न कि ग़ुलाम से। फिर मुझसे बढ़कर अल्लाह का ग़ुलाम और कौन होगा।"

हज़रत उमर *(रज़ि.)* की आवाज़ रंजो-ग़म में डूबी हुई थी। जब तक वह ऊँट मिल न गया, आप को चैन न आया।

दीन की समझ

दीन के मामले में हज़रत उमर *(रज़ि॰)* की समझ-बूझ बहुत तेज़ थी। सोच-समझकर जो राय देते थे वह अटल होती थी। अल्लाह के रसूल *(सल्ल॰)* को उन्होंने जो मशवरे दिए वे अल्लाह को भी पसन्द आए और वे मज़हबी अहकाम बना दिए गए। मिसाल के तौर पर—

1. अज़ान देने का जो तरीक़ा उन्होंने तजवीज़ किया था वही दीनी हुक्म बन गया।

2. बद्र की लड़ाई के मौक़े पर जो क़ैदी पकड़कर लाए गए थे उनके बारे में प्यारे नबी *(सल्ल॰)* ने सहाबा *(रज़ि॰)* से राय ली कि उनके साथ कैसा बर्ताव किया जाए। जो राय हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने दी थी, वही अल्लाह को पसन्द आई और उसी के बारे में वह्य नाज़िल हुई।

3. शराब को हराम कर देने का मशवरा हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने प्यारे नबी *(सल्ल॰)* को दिया था कुछ दिनों बाद उसी के मुताबिक़ वह्य नाज़िल हुई।

4. उन्होंने प्यारे नबी *(सल्ल॰)* को यह भी मशवरा दिया था कि, "आपकी पाक़ बीवियाँ सबके सामने न आया करें।" अल्लाह ने उसी के मुताबिक़ हुक्म दिया।

5. हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने प्यारे नबी *(रज़ि॰)* के सामने अपनी यह ख़ाहिश ज़ाहिर की थी कि "मक़ामे-इब्राहीम को मुसल्ला बना दिया जाए।" कुछ दिनों के बाद अल्लाह ने ऐसा ही हुक्म नाज़िल फ़रमा दिया।

उसूल की पाबन्दी

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के लड़के अबू-शहमा ने इत्तिफ़ाक़ से मिस्र में शराब पी ली। वहाँ के हाकिम अम्र-बिन-आस *(रज़ि.)* ने उनको अपने घर में बुलाकर आहिस्ता-आहिस्ता कोड़े मार दिए। इसकी सूचना हज़रत उमर *(रज़ि.)* को मिली तो उन्होंने उनको लिखा : "ऐ अम्र-बिन-आस! तुमको यह हिम्मत कैसे हुई कि मेरे हुक्म के ख़िलाफ़ तुमने यह अमल किया। यह ख़याल करके कि अबू-शहमा अमीरुल-मोमिनीन का लड़का है, घर के अन्दर बुलाकर हल्की सज़ा दी। हालाँकि तुमको उसके साथ भी वही मामला करना चाहिए जो दूसरों के साथ करते हो। अच्छा अब उसको मेरे पास भेज दो ताकि उसको मुनासिब सज़ा दी जाए।"

जब अबू-शहमा आ गए तो हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उनको अपने सामने बुलाया। वे सामने आकर रोने लगे और कहा, "ऐ प्यारे अब्बू! मैं बीमार हूँ! दोबारा मुझे सज़ा न दी जाए। मैं मर जाऊँगा।" दूसरे सहाबा *(रज़ि.)* ने भी यही मशवरा दिया। मगर जब हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने किसी की बात न सुनी और दस्तूर के मुताबिक़ सबके सामने सज़ा दी तो इससे अबू-शहमा की बीमारी और बढ़ गई और एक महीने के बाद उनका इन्तिक़ाल हो गया।

इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन।

कारनामे

आज से चौदह सौ साल पहले हज़रत उमर फ़ारूक़ *(रज़ि.)* ने ऐसी हुकूमत की नीव रखी जो आज हमारे लिए रास्ते के चिराग़ का काम देती है। हम तो हम आज कल के बड़े-बड़े सियासत दाँ भी जब आपके वक़्त का इतिहास पढ़ते हैं तो दंग रह जाते हैं और अपने माननेवालों को यह नसीहत करने पर मजबूर हो जाते हैं कि अगर तुम्हें हुकूमत करना है तो उमर *(रज़ि.)* जैसी हुकूमत करना, जिनके ज़माने में शेर और बकरी एक ही घाट पर पानी पिया करते थे और किसी की मजाल न होती थी कि एक-दूसरे पर ग़लत नज़र डाल सके।

आइए! आज आप भी हज़रत उमर *(रज़ि.)* की हुकूमत के निज़ाम की कुछ झलकियाँ देखते चलिए और इस हक़ीक़त को एक बार फिर अपने ज़ेहन में ताज़ा कर लीजिए कि इस्लाम निरा मज़हब ही नहीं है। वह सिर्फ़ इबादत करने के तरीक़े ही नहीं बताता बल्कि सियासत के उसूल और हुकूमत करने का मिसाली तरीक़ा भी सिखाता है।

सल्तनत का फैलाव

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के ज़माने में एक हज़ार छत्तीस शहर फ़तह हुए थे और नीचे लिखे मुल्क इस्लामी हुकूमत में शामिल हो गए थे।

इराक़े-अजम, इराक़े-अरब, अलजज़ीरा, ईरान, आरमीनिया आज़रबाईजान, सीसतान, ख़ुरासान, ख़ोज़िस्तान, किरमान, मकरान, बलूचिस्तान का कुछ भाग, सिंध का कुछ भाग (साहिली शहर दीबल और थाना) सीरिया, फ़लस्तीन, मिस्र।

उनके वक़्त में इस्लामी हुकूमत का फैलाव बहुत बढ़ गया था। इसलिए इन्तिज़ाम की सुहूलत की ख़ातिर पूरी हुकूमत को नीचे लिखे तेरह राज्यों में बाँट दिया गया था। हर राज्य का वाली, यानी हाकिम अलग-अलग होता था।

मक्का, मदीना, सीरिया, जज़ीरा, बसरा, कूफ़ा, फ़लस्तीन [इनको दो भागों में बाँट दिया गया था जिनके सदर मक़ाम (राजधानी) ऐलिया और रमला थे।] मिस्र का ऊपरी हिस्सा, मिस्र का निचला हिस्सा, ख़ुरासान, आज़रबाईजान, फ़ारस।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के क़ब्ज़े में जितने मुल्क थे उनका कुल क्षेत्रफल 2251030 वर्ग मील था।

राज्यों का इन्तिज़ाम

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने राज्यों की व्यवस्था ठीक ढंग से चलाने के लिए हर राज्य में कुछ बड़े-बड़े ओहदेदार मुक़र्रर किए, जो इस प्रकार हैं—

1. वाली :- यह पूरे राज्य का हाकिम होता था। राज्य व्यवस्था में अगर कहीं गड़बड़ होती थी तो उसे जवाब देना पड़ता था।

2. कातिब :- यानी मीर मुंशी, इसकी ज़िम्मेदारी यह थी कि पूरे राज्य में जो कुछ हो उसे लिखता रहे और राज्य के हाकिम की सेवा में पेश कर दे।

3. कातिबे-दीवान :- यानी फ़ौजी कार्यालय का मीर मुंशी। फ़ौज की सभी ज़रूरतों का ख़याल रखना उसके मुताल्लिक़ मालूमात इकट्ठा करना उसकी ड्यूटी होती थी।

4. साहिबुल-ख़िराज :- यानी कलक्टर (प्रबन्धक)। ज़कात, जिज़्या और चुंगी आदि की व्यवस्था बनाना और उसका हिसाब-किताब रखने का काम उसके सुपुर्द था।

5. साहिबे-अहदास :- यानि पुलिस अफ़सर। यह पूरे राज्य की पुलिस का ज़िम्मेदार होता था। राज्य में व्यवस्था, अमन और शान्ति बनाए रखना उसकी ड्यूटी थी।

6. साहिबे-बैतुलमाल :- यानी ख़ज़ाने का अफ़सर। उसका काम यह था कि राज्य की आमदनी और ख़र्च की निगरानी करे और हिसाब-किताब रखे।

7. क़ाज़ी-उल-क़ज़ात :- यानी जज। जनता की पुकार सुनना और उनके मुक़द्दमे को शरीअत के मुताबिक़ तय करना यह उसकी ज़िम्मेदारी थी।

पुलिस अफ़सर की ज़िम्मेदारी

साहिबे-अहदास (पुलिस अफ़सर) को ख़ास तौर पर हिदायत थी कि अमन और शान्ति क़ायम रखने के साथ-साथ लोगों की देख-भाल भी करते रहें। मसलन दुकानदारों की जाँच करें कि वे नाप-तौल में कमी तो नहीं करते। कोई आदमी आम रास्ते पर मकान तो नहीं बना रहा है। जानवरों पर अधिक बोझ तो नहीं लादा जाता। शराब का कारोबार तो नहीं हो रहा। इसी क़िस्म के और बहुत से कामों की निगरानी करते रहना, जिनका ताल्लुक़ जनता के फ़ायदे से हो या जिससे शरीअत के हुक्मों की नाफ़रमानी होती है।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* सिर्फ़ हुक्म ही नहीं देते थे बल्कि ख़ुद निगरानी भी करते रहते थे कि उनपर अमल हो रहा है या नहीं। इसी लिए तो उनकी ख़िलाफ़त के ज़माने में मुल्क का सारा इन्तिज़ाम बहुत ही ख़ूबी और बड़े अच्छे तरीक़े से चलता रहा और यही वजह है कि आज के बड़े-बड़े लोग हज़रत उमर *(रज़ि.)* की राज्य-व्यवस्था को मिसाल के तौर पर पेश करते हैं।

जेल-ख़ाना और बैतुलमाल

हज़रत उमर *(रज़ि.)* के ज़माने से पहले अरब में जेलख़ाने का चलन भी नहीं था। उन्होंने पहले तो मक्का में सफ़वान-बिन-उमय्या का मकान चार हज़ार दिरहम में ख़रीदकर उसको जेल ख़ाना बनाया। फिर दूसरे ज़िलों में भी जेलख़ाने बनवाए।

उन्होंने ही देश निकाला की सज़ा भी ईजाद की। यानी अगर कोई आदमी अपने वतन के लिए मुसीबत का सबब बन रहा हो, समझाने और सज़ा देने से भी बाज़ न आता हो तो उसको वतन से निकाल दिया जाता था।

उनके ज़माने से पहले कोई मुस्तक़िल ख़ज़ाना (Permanent Treasury) न था बल्कि हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* ने एक मकान उस काम के लिए मख़सूस कर लिया था। लेकिन वह हमेशा बन्द ही रहता था। उन्होंने सन् 15 हिजरी में मजलिसे शूरा की मंज़ूरी के बाद ही मदीना में बहुत बड़ा ख़ज़ाना क़ायम किया और सभी ज़िलों में उसकी शाखाएँ खुलवाईं।

जनता की हुकूमत

सच पूछो तो हज़रत उमर *(रज़ि.)* की ख़िलाफ़त एक अवामी हुकूमत थी। हर काम आपस के मशवरे से होता था। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने मजलिस यानी कमेटी बना दी थी जिसका नाम मजलिसे-शूरा था। मुहाजिर और अनसार के चुने हुए अक़्लमन्द और सोच-विचार करनेवाले लोग इसके मेम्बर होते थे। सभी मसले पहले मजलिसे-शूरा में पेश होते थे, उनपर अच्छी तरह सोच-विचार होता था, हर आदमी अपनी सोची-समझी राय देता था, फिर कोई फ़ैसला होता था। इस मजलिस के ख़ास-ख़ास मेम्बरों के नाम ये थे-

हज़रत उस्मान *(रज़ि.)*, हज़रत अली *(रज़ि.)*, हज़रत अब्दुर्रहमान-बिन-औफ़, हज़रत मुआज़-बिन-जबल *(रज़ि.)*, हज़रत उबैय-बिन-काब *(रज़ि.)* और हज़रत ज़ैद-बिन-साबित *(रज़ि.)*।

इसके अतिरिक्त एक मजलिसे-आम भी थी जिसमें मुहाजिरीन और अनसार के अतिरिक्त दूसरे क़बीलों के सरदार भी शरीक होते थे। इस मजलिस में उन मामलों पर भी ग़ौर किया जाता था जो ज़्यादा अहम होते थे। वैसे रोज़मर्रा के मामले तो मजलिसे-शूरा ही तय कर देती थी। उन दोनों मजलिसों के अतिरिक्त एक तीसरी मजलिस भी थी, जिसको मजलिसे-ख़ास कहते थे। इसमें सिर्फ़ मुहाजिर सहाबा *(रज़ि.)* शरीक होते थे।

इसी प्रकार हुकूमत के सभी फ़ैसले जनता के मशवरे से होते थे। और ऐसी ही हुकूमत को जनता की हुकूमत कहा जाता है।

जनता की हुकूमत की पहचान

जनता की हुकूमत की एक पहचान यह भी है कि अगर हाकिम से कोई ग़लती हो रही हो तो जनता में से हर एक का यह फ़र्ज़ है कि उसको उस ग़लती से होशियार कर दे। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने लोगों को इजाज़त दे रखी थी कि जिस बात में उनको शक हो फ़ौरन टोक दिया करें।

एक मौक़े पर एक आदमी ने कई बार हज़रत उमर *(रज़ि.)* को मुख़ातब करके कहा, "ऐ उमर! ख़ुदा से डर।" हाज़िर लोगों में से एक आदमी ने उसको रोका और कहा, "बस बहुत हो गया अब चुप रहो।" हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने जो सुना तो कहा, "नहीं कहने दो। अगर ये लोग न कहें तो ये किस काम के हैं? और हम लोग न सुनें और न मानें तो हम भी बेकार हैं।"

देखा आपने, इन बातों का असर। इसी तरीक़े से हाकिम और जनता दोनों के इख़्तियार और हदें सभी लोगों पर प्रकट हो गई थीं।

ग़लती पर टोकने की आज़ादी

इसी तरह की एक और घटना है।

एक बार आप मिम्बर पर तशरीफ़ लाए और हाज़िर लोगों से मुख़ातिब हुए, "मैं तुमसे कुछ बातें कहना चाहता हूँ, क्या तुम उसपर अमल करोगे?" सभा में से एक आदमी खड़ा हो गया और तेज़ लहजे में बोला, "हम तुम्हारी कोई बात नहीं मानेंगे। क्योंकि तुमने इनसाफ़ से काम नहीं लिया है।" हर तरफ़ सन्नाटा छा गया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने पूछा, "आख़िर बात क्या है?" उस आदमी ने ज़वाब दिया, "कुछ दिनों की बात है, माले-ग़नीमत में कुछ चादरें आई थीं और इसी मस्जिद के सेहन में एक-एक बाँटी गई थी। इनसाफ़ तो यह था कि तुमको भी एक ही चादर लेनी चाहिए थी। आज जो कुर्ता तुम पहने खड़े हो यह उसी चादर का है और एक चादर में इतना बड़ा कुर्ता नहीं बन सकता। इससे ज़ाहिर होता है कि तुमने दो चादरें ली हैं। आख़िर ऐसा क्यों?" हज़रत उमर *(रज़ि.)* इस एतिराज़ से बिलकुल नाराज़ नहीं हुए बल्कि अपने बेटे हज़रत अब्दुल्लाह से मुख़ातिब होकर कहा, "बेटे! मेरी तरफ़ से तुम जवाब दे दो ताकि इस आदमी की ग़लत फ़हमी दूर हो जाए।" हज़रत अब्दुल्लाह ने खड़े होकर कहा, "मेरे वालिद ने भी एक ही चादर ली थी। वे उसका कुर्ता बनाना चाहते थे जो उसमें से नहीं बन सकता था। यह देखकर मैंने अपने हिस्से की चादर भी अपने वालिद को दे दी और उन्होंने कुर्ता बनवा लिया।" यह जवाब सुनकर उस आदमी को इत्मीनान हो गया।

औरत ने टोक दिया

किसी ग़लती पर टोक देने की आज़ादी सिर्फ़ मर्दों ही को हासिल नहीं थी बल्कि औरतें भी टोक दिया करती थीं। एक बार हज़रत उमर *(रज़ि.)* महर की मिक़दार के बारे में तक़रीर कर दे रहे थे। एक औरत ने तक़रीर के बीच टोक दिया और कहा, "ऐ उमर! ख़ुदा से डर। जब अल्लाह के रसूल *(सल्ल.)* ने महर की कोई मिक़दार मुक़र्रर नहीं की है तो तुम उसको मुक़र्रर करनेवाले कौन होते हो।"

उस औरत का एतिराज़ सही था। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उसे तसलीम कर लिया और कहा, "एक औरत भी उमर से अधिक जानती है।"

देखा आपने, आज़ादी और बराबरी की यह शान थी। इसी वजह से तो हज़रत उमर *(रज़ि.)* की ख़िलाफ़त इतनी मशहूर और कामयाब हुई।

खेती बाड़ी को तरक़्क़ी देना

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने खेती की तरफ़ ख़ास तवज्जुह दी। उन्होंने किसानों को बहुत सुहूलतें पहुँचाईं। ज़मीनों का बन्दोबस्त करने में उनसे मशवरा लिया। खेतों में पानी पहुँचाने के लिए उन्होंने पूरे मुल्क में नहरों का जाल बिछा दिया। बड़ी नहरों से छोटी नहरें निकलवाकर दूर से दूर की ज़मीनों को भी सींचने की व्यवस्था कर दी। ये सभी सुहूलतें देने के बावजूद पिछली हुकूमतों के मुक़ाबले में माल गुज़ारी बहुत कम कर दी। जिसकी वजह से किसान लोग इस्लामी हुकूमत के सच्चे ख़ैरख़ाह और वफ़ादार बन गए।

किसानों के साथ अगर किसी क़िस्म की कोई ज़्यादती होती थी तो वे उस तरफ़ फ़ौरन तवज्जुह देते थे। एक बार शाम (सीरिया) के एक किसान ने आकर शिकायत की कि आपकी फ़ौज मेरे खेतों की तरफ़ से गुज़री और रौंद कर बरबाद कर दिया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने मालूम करने के बाद उसको 10 हज़ार दिरहम उसके बदले में दिलवा दिए।

देखा आपने, कितनी जल्दी उन्होंने इस परेशानी की तरफ़ तवज्जुह फ़रमाई।

बेहतरीन सिपहसालार

हज़रत उमर *(रज़ि.)* सिर्फ़ एक अच्छे हाकिम ही नहीं थे बल्कि अपने ज़माने के बेहतरीन सिपहसालार भी थे। ख़िलाफ़त के शुरू में जैसा कि आप पढ़ चुके हैं, शाम, इराक़, ईरान और मिस्र हर मुल्क में मुसलमानों से लड़ाइयाँ हो रही थीं। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने सैकड़ों मील दूर रहते हुए भी उन जंगों की निगरानी की और फ़ौजों को लड़ाया था।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने हर फ़ौजी सरदार को यह हिदायत कर दी थी कि वह रोज़ की रोज़ ख़बरें और जंग के हालात दरबारे-ख़िलाफ़त में भेजता रहे। वे उन रिपोर्टों को पढ़ते और हालात के मुताबिक़ मशवरे और हिदायतें हर फ़ौजी सरदार को भेज दिया करते थे। फ़ौजी सरदार इन हिदायतों पर अमल करते हुए अपनी-अपनी फ़ौजों को लड़ाया और फ़तह हासिल किया करते थे।

इस तरह उन सारी जंगों की निगरानी ख़ुद हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने की थी। सच है कि आप एक बेमिसाल मुन्तज़िम होने के साथ-साथ अपने वक़्त के बेहतरीन सिपहसालार भी थे।

क़ाज़ियों को मुक़र्रर करना

हज़रत उमर *(रज़ि.)* बहुत ही इनसाफ़ पसन्द ख़लीफ़ा थे। उनका इनसाफ़ अब तक मशहूर है। अमीर-ग़रीब, बादशाह-रिआया, अपने और पराए सबके साथ एक जैसा बर्ताव किया जाता था।

हज़रत उमर *(रज़ि.)* जब किसी को क़ाज़ी मुक़र्रर करते थे तो पहले उसका इम्तिहान ले लिया करते थे। क़ाज़ी शुरैह के इम्तिहान की घटना बहुत मशहूर है। आप भी पढ़िए :

हुआ यह कि हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने पसन्द की शर्त पर एक घोड़ा ख़रीदा और जाँच करने के लिए उसपर सवारी की। इत्तिफ़ाक़ से घोड़ा चोट खाकर दाग़ी हो गया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उसे वापस करना चाहा। घोड़े के मालिक ने वापस लेने से इनकार कर दिया। दोनों शुरैह इराक़ी के पास फ़ैसले के लिए पहुँचे। उन्होंने पूरी घटना सुनी और बिना कोई रिआयत किए हज़रत उमर *(रज़ि.)* से कहा, "अमीरुल-मोमिनीन! या तो आप ये घोड़ा ख़रीद लें या फिर जैसा लिया था वापस कर दें।"

हज़रत उमर *(रज़ि.)* को यह फ़ैसला बहुत पसन्द आया और शुरैह *(रह.)* को उन्होंने कूफ़ा का क़ाज़ी मुक़र्रर कर दिया। जहाँ वे साठ साल तक उसी ओहदे पर रहे और क़ाज़ी शुरैह के नाम से मशहूर हुए।

नसीहत से भरा ख़त

इससे पहले आप पढ़ चुके हैं कि हज़रत उमर *(रज़ि.)* इनसाफ़ पसन्द थे। नाइनसाफ़ी आपको एक आँख न भाती थी और यही चाहते थे कि उनके मुक़र्रर किए हुए हाकिम भी मुक़द्दमों को पूरी तवज्जुह से सुना करें और दियानतदारी के साथ फ़ैसले दिया करें। इस सिलसिले में आपने हज़रत अबू-मूसा-अशअरी *(रज़ि.)* को, जो प्यारे नबी *(सल्ल.)* के सहाबी और बसरा के हाकिम थे, एक नसीहत भरा ख़त लिखा था। उसकी एक-एक नसीहत बड़ी क़ीमती है ख़त का ख़ुलासा यह है :

"मुक़द्दमों का फ़ैसला करना बहुत ज़िम्मेदारी का काम है। जब कोई मुक़द्दमा तुम्हारे सामने पेश हो तो उसकी एक-एक बात पर ग़ौर करो और सोचो तब फ़ैसला करो। फ़ैसला देने के बाद उसके मुताबिक़ अमल भी ज़रूरी है। मुद्दई और मुद्दा अलैह (अर्थात वादी और प्रतिवादी) दोनों के साथ एक जैसा बर्ताव करो। दावा करनेवाले से गवाह माँगे जाएँ और जो दावा न माने उससे क़सम ली जाए। मुसलमानों में सुलह करा देना बहुत अच्छा है। जो आदमी दावा साबित करने के लिए मुहलत माँगे, उसे मुहलत दी जाए। अगर गवाह पेश कर दिए जाएँ तो उनकी गवाही को सामने रखकर फ़ैसला करो और अगर वे गवाह न पेश कर सके तो मुक़द्दमा ख़ारिज कर दो। हर मुसलमान की बात को सच्चा समझो सिवाए उसके जो किसी मामले में सज़ा पा चुका हो या उसने झूठी गवाही दी हो। मुद्दई या मुद्दाअलैह की तरफ़ से तुम्हारे दिल में नाराज़ी, उकताहट या चिड़-चिड़ापन बिल्कुल पैदा नहीं होना चाहिए। क्योंकि हक़ और इनसाफ़ पर क़ायम रहनेवाला अल्लाह के इनाम और अच्छी शोहरत का हक़दार होता है। जिसने अपनी नीयत सही रखी उसके और लोगों के बीच अल्लाह काफ़ी है। जो बनावटी अख़लाक़ से पेश आता है उसे अल्लाह के रिज़्क़ और रहमत की उम्मीद नहीं रखनी चाहिए।"

देखा आपने, फ़ैसला करने के कितने क़ीमती उसूल हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने बयान किए हैं। अगर आज भी इनपर अमल किया जाए तो कोई हक़दार अपने हक़ से महरूम नहीं रह सकता और न किसी के साथ ना इनसाफ़ी हो सकती है।

इनसाफ़ की नज़र में सब बराबर

इसी तरह की एक और घटना है। हज़रत उमर *(रज़ि.)* और उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* में किसी मामले में इख़तिलाफ़ हो गया। हज़रत उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* ने ज़ैद-बिन-साबित के यहाँ मुक़द्दमा दायर कर दिया। हज़रत उमर *(रज़ि.)* मुद्दाअलैह की हैसियत से हाज़िर हुए। ख़लीफ़ा होने की वजह से हज़रत ज़ैद *(रज़ि.)* ने उनको इज़्ज़त के साथ बैठाना चाहा। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने एतिराज़ किया, "ज़ैद यह तुम्हारी पहली ना इनसाफ़ी है।" यह कहकर ख़ुद हज़रत उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* के बराबर बैठ गए। उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* के पास कोई सुबूत न था और हज़रत उमर *(रज़ि.)* को दावे से इनकार था। उसूल के मुताबिक़ उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* से क़सम लेनी चाही लेकिन हज़रत ज़ैद *(रज़ि.)* ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* के मंसब को ध्यान में रखते हुए उबई-बिन-काब *(रज़ि.)* से दरख़ास्त की कि अमीरुल-मोमिनीन को क़सम से माफ़ रखा जाए। हज़रत ज़ैद *(रज़ि.)* की यह दूसरी तरफ़दारी देखकर हज़रत उमर *(रज़ि.)* को बहुत दुख हुआ वे उनसे मुख़ातिब हुए :

> "ऐ ज़ैद! न्याय करते समय जब तक अमीर और फ़क़ीर, एक आम आदमी और उमर तुम्हारे नज़दीक बराबर न हों, तुम क़ाज़ी के ओहदे के क़ाबिल नहीं समझे जा सकते।"

ख़बर पहुँचाने का इन्तिज़ाम

इस्लामी हुकूमत बहुत दूर तक फैल गई थी और फ़ारूक़ी लश्कर मुल्क के चप्पे-चप्पे में फैला हुआ था। मर्कज़ यानी मदीना से सेनाएँ सैकड़ों और हज़ारों मील की दूरी पर थीं, मगर हज़रत उमर *(रज़ि.)* हर फ़ौज और उसके सिपहसालार के बारे में पूरी-पूरी जानकारी रखते थे। उनको ज़रा-ज़रा सी बात का पता चलता रहता था कि किस फ़ौज में क्या हो रहा है। वह किधर जा रही है, उसको किन-किन परेशानियों से जूझना पड़ रहा है। उसी के मुताबिक़ आप बराबर मशवरे और हिदायत दिया करते थे।

उसका तरीक़ा उन्होंने यह रखा था कि हर फ़ौज में कुछ आदमियों को मुक़र्रर कर दिया था जो रोज़ाना की ख़बरें हर दिन आपको भेजते रहते थे। इसके अलावा उन्होंने जासूसी का महकमा भी क़ायम किया था। उर्दुन और फ़लस्तीन के इलाक़ों में यहूदियों का एक फ़िरक़ा रहता था जो सामरा कहलाता था। उन लोगों को ख़ास-तौर से जासूसी के लिए मुक़र्रर किया गया था। उस ख़िदमत के बदले में उनको ज़मीनें दे दी गई थीं।

इस तरह हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने पूरी इस्लामी हुकूमत के हालात मालूम करने का इन्तिज़ाम किया था। जिससे कि हर बात की जानकारी रहे और फिर उसी के मुताबिक़ इन्तिज़ाम कर सकें।

तालीम की तरक़्क़ी

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने तालीम को बहुत तरक़्क़ी दी। पूरे मुल्क में इबतिदाई मदरसे क़ायम कराए, जहाँ क़ुरआन मजीद की तालीम दी जाती थी। वहाँ इसके अलावा हदीस और फ़िक़्ह की तालीम का भी इन्तिज़ाम किया। इसके लिए बड़े-बड़े उलमा और सहाबा *(रज़ि.)* को हर ज़िले में मुक़र्रर किया गया। इनकी अच्छी ख़ासी तनख़ाहें होती थीं।

मसजिदे-नबवी में बच्चों और बच्चियों का इबतिदाई मदरसा क़ायम किया। जहाँ हज़रत अब्दुल्लाह-बिन-ख़ज़ाई *(रज़ि.)* पढ़ाया करते थे। तालीम के लिए दो वक़्त मुक़र्रर थे। फ़ज्र की नमाज़ के थोड़ी देर बाद से दिन चढ़े तक और फिर ज़ुहर की नमाज़ से अस्र की नमाज़ तक।

एक बार हज़रत उमर *(रज़ि.)* शाम (सीरिया) के सफ़र पर गए। जब वहाँ से लौटे तो मदरसे के बच्चों ने आगे बढ़कर इस्तिक़बाल किया। यह जुमेरात का दिन था। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उस वक़्त आधा दिन जुमेरात और पूरे दिन जुमा की छुट्टी का ऐलान कर दिया। आज तक दीनी मदरसों में पढ़ाई का यही वक़्त और यही छुट्टी का दिन राइज है।

हिजरी सन की शुरूआत

हज़रत उमर *(रज़ि.)* से पहले न सन था न साल। किसी न किसी ख़ास घटना से साल का हिसाब लगाया करते थे। महीने थे मगर सन न था। जब आप ख़लीफ़ा हुए तो 16 हिजरी में एक चेक हस्ताक्षर के लिए आपके सामने पेश किया गया। उसपर तारीख़ की जगह सिर्फ़ शाबान शब्द लिखा था। यह बात हज़रत उमर *(रज़ि.)* को खटकी। उन्होंने कहा यह कैसे मालूम हो कि यह बीता हुआ शाबान है या मौजूदा। आपने उसी वक़्त मजलिसे-शूरा की बैठक बुलाई और उसके सामने यह मसला पेश किया। सबने तय किया कि तारीख़ महीना और साल सब होना चाहिए। लेकिन एक बात फिर रह गई कि सन को शुरू कब से किया जाए। सबने अपनी-अपनी राय दी। लेकिन हज़रत अली *(रज़ि.)* की राय को सबने क़बूल कर लिया। उनकी राय थी कि उसे प्यारे नबी *(सल्ल.)* की हिजरत से शुरू किया जाए।

इस तरह हिजरी सन् की शुरूआत हुई जो हमें हर वक़्त प्यारे नबी *(सल्ल.)* की हिजरत की याद दिलाता रहता है।

ज़िम्मियों के हुक़ूक़

इस्लाम ने ज़िम्मियों के साथ अच्छे बर्ताव का हुक्म दिया है। उनकी जान, माल, इज़्ज़त, आबरू, ज़मीन और मज़हब की सुरक्षा इस्लामी हुकूमत के ज़िम्मे थी। हज़रत उमर *(रज़ि.)* खुद बराबर इसकी निगरानी किया करते थे और राज्य के हाकिमों को इस सिलसिले में खुसूसी फ़रमान भेजते रहते थे। ये बातें सिर्फ़ दिखावे के लिए या काग़ज़ी न थीं बल्कि इनपर पूरी तरह अमल किया जाता था।

एक बार क़बीला बक्र-बिन-वाइल के एक आदमी ने जो मुसलमान था, हैरा के एक ईसाई को मार डाला। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उस मुसलमान को मरनेवाले के वारिसों के सुपुर्द कर दिया। उन्होंने उसे क़त्ल करके बदला ले लिया।

इसी तरह जो ज़मीनें उनके पास पहले से थीं वे उन ही के पास रहने दी गईं और उनपर किसी मुसलमान को क़ब्ज़ा करने की इजाज़त नहीं थी।

मुल्क के इन्तिज़ाम के सिलसिले में जो बातें ज़िम्मियों से मुताल्लिक़ होतीं वे बिना उनके मशवरे के तय नहीं की जाती थीं। यही वजह है कि ज़िम्मी अपने मुल्कों में रहने के बजाए इस्लामी हुकूमत में रहना ज़्यादा पसन्द करते थे क्योंकि यहाँ उनको उनके पूरे-पूरे हुक़ूक़ मिलते थे। अपने मुल्कों में वे उनसे महरूम रहते थे।

अमीरुल-मोमिनीन का लक़ब

एक बार लबीद-बिन-रबीअ *(रज़ि.)* और अदी-बिन-हातिम *(रज़ि.)* मदीना में आए और हज़रत उमर *(रज़ि.)* की ख़िदमत में हाज़िर होना चाहा। चूँकि वे कूफ़ा में रहे थे इसलिए अमीरुल-मोमिनीन का लफ़्ज़ ज़बान पर चढ़ा हुआ था। उन्होंने ख़बर कराने के वक़्त यह कहा कि अमीरुल-मोमिनीन को हमारे आने की ख़बर दे दो। कहनेवाले ने यही लक़ब इस्तेमाल करते हुए हज़रत उमर *(रज़ि.)* को ख़बर पहुँचा दी। उनको यह लफ़्ज़ बहुत पसन्द आया। उसी दिन से लफ़्ज़ 'अमीरुल-मोमिनीन' मुसलमानों के ख़लीफ़ा के लिए इस्तेमाल होने लगा।

पानी का इन्तिज़ाम

यह तो तुम जानते ही हो कि अरब में पानी की बहुत कमी थी। लोगों को इस सिलसिले में बहुत परेशानियों का सामना करना पड़ता था। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने जनता की इस परेशानी को शिद्दत से महसूस किया और नहरों की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जुह फ़रमाई। ये नहरें केवल जनता को पानी पहुँचाने के लिए बनवाई गई थीं। सिंचाईवाली नहरें उनके अलावा थीं।

1- **नहरे-अबू-मूसा :-** यह नहर 9 मील लम्बी थी। दजला नदी से काटकर बसरा में लाई गई थी। इसके ज़रीए से हर घर में पानी की सुहूलत हो गई।

2- **नहरे-मुअक़्क़ल :-** यह नहर भी दजला से काटकर लाई गई थी।

3- **नहरे-साद :-** यह नहर जब बनना शुरू हुई तो रास्ते में एक पहाड़ आ गया। इसलिए इसका बनना रुक गया। हज्जाज-इब्ने-यूसुफ़ ने इसको पूरा कराया।

4- **नहरे-उमर :-** यह नहर सबसे बड़ी और कारआमद थी। यह नील नदी को बहरे-क़ुल्ज़ुम से मिलाती थी। इसकी लम्बाई 69 मील थी।

इमारतें बनवाईं

इस्लामी हुकूमत जब अलग-अलग राज्यों में बाँट दी गई तो उनके हाकिमों के रहने के लिए सरकारी इमारतें बनवाई गईं। जनता के आराम के लिए सड़कें, पुल और मसजिदें बनवाइ गईं। फ़ौजी ज़रूरत के लिए क़िले, छावनियाँ और बैरकों की तामीर हुई। मुसाफ़िरों की सुहूलत के लिए मेहमान ख़ाने बनाए गए। ख़ज़ाने की हिफ़ाज़त के लिए हर राज्य में बैतुलमाल की इमारतें तैयार हुईं। कहते हैं कि हज़रत उमर *(रज़ि.)* के ज़माने में लगभग चार हज़ार मसजिदें बनाई गईं।

मक्का और मदीना के बीच के रास्ते को आरामदेह बनाने के लिए हर पड़ाव पर चौकियाँ, सराएँ और कुँए तैयार कराए गए। किसानों के आराम के लिए पूरी हुकूमत में नहरें बनवाई गईं।

इस तरह हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने जनता को आराम पहुँचाने के लिए तरह-तरह के इन्तिज़ाम किए।

शहरों को आबाद किया

हज़रत उमर *(रज़ि.)* की ख़िलाफ़त के ज़माने में कई ऐसे शहर भी आबाद किए गए थे जो तारीख़ में बहुत मशहूर हैं।

1- **बसरा** :- उतबा-बिन-ग़ज़वान ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* की इजाज़त से इस शहर को आबाद किया। शुरू में सिर्फ़ आठ सौ आदमी यहाँ आकर बसे थे लेकिन देखते ही देखते इसकी आबादी लगभग डेढ़ लाख हो गई। इल्मी हैसियत से यह शहर बहुत मशहूर हुआ।

2- **कूफ़ा** :- पुराने ज़माने में यह एक अरब बादशाह नोमान-बिन-मुंज़िर की राजधानी थी लेकिन यह उजड़ चुका था। हज़रत साद-बिन-अबी-वक़्क़ास *(रज़ि.)* ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* के हुक्म से उसको फिर आबाद किया। उनकी हिदायत के मुताबिक़ बड़ी सड़कें चालीस-चालीस हाथ चौड़ी रखी गईं। उनसे छोटी 30 हाथ और उनसे छोटी बीस हाथ चौड़ी थीं। जामा मसजिद इतनी बड़ी थी कि उसमें चालीस हज़ार आदमी एक ही वक़्त में नमाज़ अदा कर सकते थे। इस शहर ने हज़रत उमर *(रज़ि.)* के वक़्त ही में बड़ी तरक़्क़ी की। हज़रत इमाम अबू-हनीफ़ा *(रह.)* यहीं के रहनेवाले थे।

3- **फ़िसतात** :- नील नदी और मुक़तम पहाड़ के बीच एक बहुत बड़ा मैदान था। जब हज़रत अम्र-बिन-आस *(रज़ि.)* ने मिस्र पर हमला किया था तो इसी मैदान में पड़ाव डाला था। इत्तिफ़ाक़ से एक कबूतर ने उनके ख़ेमे में घोंसला बना लिया। जब आप आगे बढ़ने लगे तो इस ख़ेमे को वहीं छोड़ दिया ताकि कबूतर का घोंसला बरबाद न हो। मिस्र की फ़तह के बाद उन्होंने उसी मैदान में एक शहर आबाद किया। इसका नाम फ़िसतात रखा। अरबी में फिसतात ख़ेमे को कहते हैं। इस शहर ने भी बहुत जल्द तरक़्क़ी की और मिस्र की राजधानी बन गया।

4- **मूसिल** :- पहले यह एक मामूली गाँव था हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने उसे बहुत बड़ा शहर बना दिया। चूँकि यह पूर्वी और पश्चिमी दुनिया को आपस में मिलाता है, इसलिए इसका नाम मूसिल रखा गया।

5- **जीज़ा** :- स्कंदरिया की फ़तह के बाद हज़रत अम्र-बिन-आस को यह ख़याल पैदा हुआ कि रूमी नदी की तरफ़ से उसपर कहीं हमला न कर दें। इसलिए उसकी हिफ़ाज़त के लिए आपने थोड़ी सी फ़ौज दरिया के किनारे पर मुक़र्रर कर दी। इन सिपाहियों को यह जगह ऐसी पसन्द आई कि वे वहीं आबाद हो गए। हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने सन् 21 हि॰ में वहीं एक क़िला बनवा दिया। इस तरह यह एक मुसतक़िल शहर बन गया और इसका नाम जीज़ा रख दिया गया।

उमर *(रज़ि॰)* की नई ईजादें

हज़रत उमर *(रज़ि॰)* ने अपनी ख़िलाफ़त के ज़माने में निम्नलिखित बातें नई ईजाद कीं।

1- बैतुलमाल, यानी ख़ज़ाना मुस्तक़िल तौर पर क़ायम किया।

2- अदालतें क़ायम कीं और फ़ैसला करने के लिए क़ाज़ी मुक़र्रर किए।

3- तारीख़ और सन मुक़र्रर किया जो आज तक जारी है।

4- अमीरुल-मोमिनीन का लक़ब अपनाया।

5- फ़ौजी और मालगुज़ारी के दफ़्तर क़ायम किए।

6- ज़मीनों की बाक़ायदा नाप कराई और जनता के आराम के लिए नहरें खुदवाईं।

7- मर्दुमशुमारी को रिवाज दिया।

8- नए-नए शहर आबाद किए।

9- पूरे मुल्क को राज्यों में बाँट दिया और उनके हाकिम मुक़र्रर किए।

10- बाक़ायदा जेलख़ाने क़ायम किए और जिला-वतनी की सज़ा राइज की।

11- पुलिस का बाक़ायदा महकमा क़ायम किया।

12- ग़रीब ईसाइयों और यहूदियों के रोज़ीने मुक़र्रर किए।

13- मदरसे क़ायम किए।

14- नमाज़ तरावीह जमाअत से क़ायम की।

15- ग़ैर-मुल्की माल पर टैक्स और तिजारती घोड़ों पर ज़कात मुक़र्रर की।

16- मुख़तलिफ़ शहरों में मेहमान ख़ाने तामीर कराए।

17- फ़ौज के लिए छावनियाँ और बैरकें बनवाईं।

18- परचा नवीस, यानी ख़बरें पहुँचानेवाले मुक़र्रर किए।

19- फ़ज्र की अज़ान में "अस्सलातु ख़ैरुम-मिनन-नौम" को बढ़ाया।

20- मसजिद में तक़रीर का तरीक़ा ईजाद किया।

21- मसजिदों में रात के समय रौशनी का इन्तिज़ाम किया।

22- वक़्फ़ का तरीक़ा ईजाद किया।

23- उस्तादों, इमामों और मुअज़्ज़िनों की तनख़ाहें मुक़र्रर कीं।

24- शराब पीने की सज़ा (हद्द) अस्सी कोड़े मुक़र्रर की।

25- इसरार करके हज़रत अबू-बक्र *(रज़ि.)* को क़ुरआन मजीद की तरतीब पर आमादा किया।

26- शाइरों पर पाबन्दी लगा दी कि अपने शेरों में न किसी की बुराई करें और न औरतों के नाम लाएँ। ख़िलाफ़वर्ज़ी करनेवाले की सज़ा भी मुक़र्रर कर दी।

प्यारी-प्यारी नसीहतें

हज़रत उमर *(रज़ि.)* ने फ़रमाया :

- जिसने नमाज़ की हिफ़ाज़त की उसने अपना दीन महफ़ूज़ कर लिया।
- अगर आख़िरत में इज़्ज़त की ज़िन्दगी चाहते हो तो दुनिया में नेक अमल करो।
- अल्लाह से डरना और उसी पर भरोसा करना मुसलमान के लिए काफ़ी है।
- अल्लाह के यहाँ नेक अमल काम आते हैं, हसब-नसब काम नहीं आता।
- अल्लाह उस आदमी की ख़ताएँ नहीं बख़्शता जो दूसरों की ग़लतियाँ माफ़ न करे।
- आदमी के रोज़े, नमाज़ पर न जाओ बल्कि उसका क़ौल (कथन) और अमल देखो।
- बेहतरीन दौलत क़नाअत है।
- इल्म के बिना बड़ाई नहीं मिलती।
- ख़ातिर मदारात से मर्तबा ऊँचा होता है।
- ज़्यादा हँसी मज़ाक़ से आदमी की इज़्ज़त कम हो जाती है।
- आज का काम कल पर न उठा रखो।
- जो क़दम पीछे हटता है फिर वह आगे नहीं बढ़ता।
- बुराई को पहचानो वरना बुराई में पड़ जाओगे।
- दूसरों के बजाए अपनी बुराइयों को खोजो।
- सब्र करने से इत्मीनान और सुकून की ज़िन्दगी हासिल होती है।
- किसी से हसद न करो, इससे दुश्मनी पैदा होती है।

- अल्लाह उस आदमी का भला करे जो मेरे ऐब मुझे बताए।
- तौबा करनेवालों के पास बैठा करो, उनके दिल बहुत नर्म होते हैं।
- सबसे बड़ा जाहिल वह है जो दूसरों की ख़ातिर अपनी आख़िरत बरबाद कर ले।
- गुनाह कम करो तो मौत आसान हो जाएगी।
- अपने मरहूम बाप के दोस्तों से अच्छा सुलूक करो तो ज़िन्दगी में कामियाबी हासिल होगी।
- लोगों की चिन्ता में तुम अपने आप को भूल न जाओ।
- बदतरीन हाकिम वह है जिसकी वजह से जनता बद-चलन हो जाए।
- तुम्हारे भाई के दिल में तुम्हारी इज़्ज़त और मुहब्बत पैदा होगी अगर तुम
  - सलाम में पहल करो।
  - उसके लिए मजलिस में जगह निकालो।
  - उसको बेहतरीन नाम से पुकारो।

अल्लाह तआला इन नसीहतों पर अमल करने की हमें तौफ़ीक़ दे। आमीन!

बच्चों के लिए कुछ हिन्दी पुस्तकें

अन्धा इनसाफ़	मतीन तारिक़ बाग़पती
एक इनसान दो किरदार	माइल ख़ैराबादी
क़ौमों की कहानियाँ	सय्यद नज़र ज़ैदी
गुड्डू की गुड़िया	माइल ख़ैराबादी
तौहीदवाला शहज़ादा	माइल ख़ैराबादी
प्यारे नबी ऐसे थे!	माइल ख़ैराबादी
प्यारे नबी कैसे थे?	इरफ़ान ख़लीली
बिसमिल्लाह की बरकत	माइल ख़ैराबादी
बड़ों का बचपन	माइल ख़ैराबादी
बड़ों की माएँ	माइल ख़ैराबादी
सबक़ आमोज़ क़ुरआनी क़िस्से	माइल ख़ैराबादी
सच्चा वायदा	मतीन तारिक़ बाग़पती
हम ऐसी बनें!	माइल ख़ैराबादी
हमारा इब्ने-बतूता	माइल ख़ैराबादी
आसान कहानियाँ	अफ़ज़ल हुसैन
आसान कहानियाँ 1	अफ़ज़ल हुसैन
आसान कहानियाँ 2	अफ़ज़ल हुसैन
आसान कहानियाँ 3	अफ़ज़ल हुसैन
आसान कहानियाँ 4	अफ़ज़ल हुसैन
क़ुरआन की बातें-1	सय्यद नज़र ज़ैदी
क़ुरआन की बातें-2	सय्यद नज़र ज़ैदी
सच्चा दीन (1,2,3,4)	अफ़ज़ल हुसैन
हमारे बुज़ुर्ग (1, 2)	माइल ख़ैराबादी
हमारे हुज़ूर *(सल्ल०)*	इरफ़ान ख़लीली